अक्तूबर २०१०

दादावाणी

मूल्य ८.०

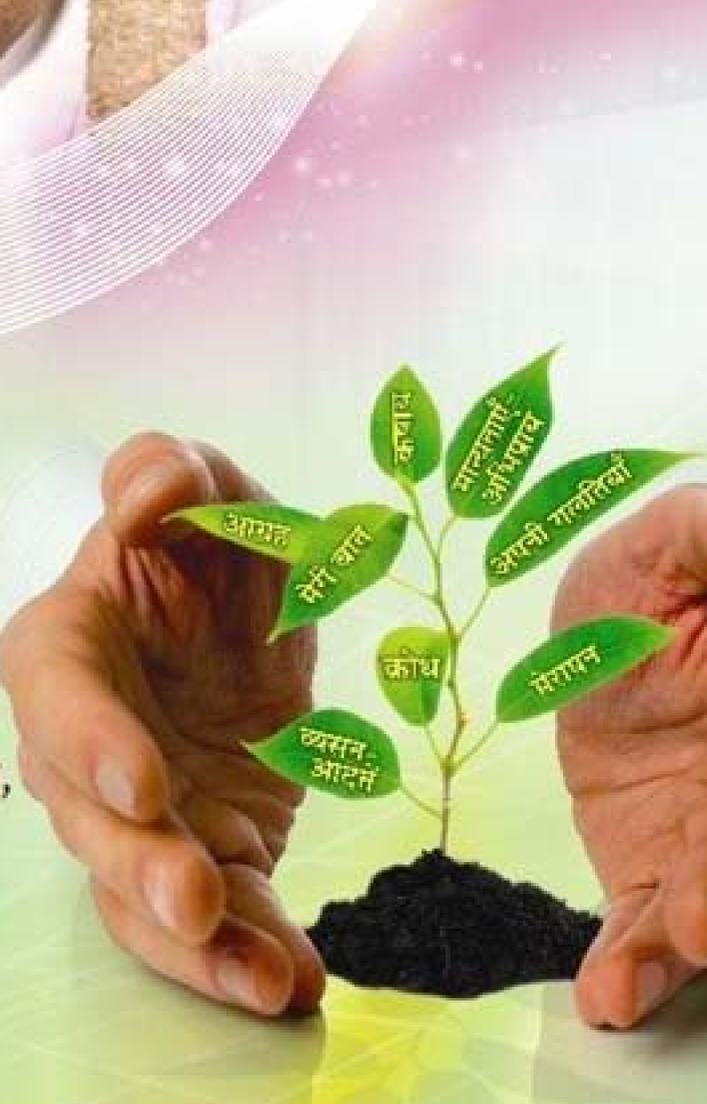
आग्रह
मेरी बात
कषाय
मान्यताएँ-अभिप्राय
अपनी गलतियाँ
क्रोध
मेरापन
व्यसन-आदतें

दूसरों की भूलें कभी भी नहीं देखेंगे,
निमित्त को दोषी कभी भी नहीं मानेंगे,
अपनी भूलों का रक्षण नहीं करेंगे,
सारी भूलें मिटाकर हम शुद्ध होंगे।

दादावाणी

तंत्री तथा संपादक :
दीपक देसाई
वर्ष : ५, अंक : १२
अखंड क्रमांक : ६०
अक्तूबर २०१०

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सीटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ वे,
पो.ओ.: **अडालज,**
जि.: गांधीनगर-३८२४२१
फोन : (०७९) ३९८३०१००
e-mail :
dadavani@dadabhagwan.org
अहमदाबाद : (079) 27540408
वडोदरा : (0265) 2414142
मुंबई : 9323528901
राजकोट त्रिमंदिर :
9924343478, 9274111393
U.S.A. : 785-271-0869
U.K.: 07956476253
Website : www.dadashri.org
hindi.dadabhagwan.org

Printed, Published & Owned by :
Deepak Desai on behalf of
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Printer/Press :
Mahavideh Foundation
Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)

१५ साल का

भारत :	८०० रुपये
यु.एस.ए. :	१५० डॉलर
यु.के. :	१०० पाउन्ड

वार्षिक

भारत :	१०० रुपये
यु.एस.ए. :	१५ डॉलर
यु.के. :	१० पाउन्ड

भारत में D.D. / M.O. 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से भेजे।

किए रक्षण, भूलों का उपराणा लेकर

संपादकीय

परम पूज्य दादा भगवान कहते हैं कि हम अपनी भूलों से बँधे हुए हैं। भूल मिटे तो परमात्मा ही हैं। ये भूलें मिट जाए तो खुद का भगवान पद प्राप्त हो जाए, ऐसा है। लेकिन ये भूलें मिटे किस तरह? सिर के बालों जितनी भूलें हैं, लेकिन खुद ही जज, खुद ही वकील और खुद ही गुनहगार, फिर किस तरह भूल का पता चले? यदि जज (आत्मा) और गुनहगार (अहंकार), दो ही लोग हों तो सारे दोष दिखते हैं, लेकिन भीतर वकील (बुद्धि) रखा है। वकील बचाव करे तो फिर भूल किस तरह मिटे? दूसरों की भूलें दिखाने के लिए खुद न्यायाधीश है, लेकिन अपनी भूल पकड़ने के लिए बिल्कुल भी न्यायाधीश नहीं है, यह भी आश्चर्य है न!

हक़ीक़त ये है कि जब तक खुद निष्पक्षपाती नहीं हो जाता, तब तक भूलें दिखाई नहीं देतीं। ज्ञानी पुरुष के पास से स्वरूपज्ञान की प्राप्ति होने से, खुद निष्पक्षपाती हो जाता है और फिर मन-वचन-काया का पक्षपात नहीं रहता, इसलिए भूलें दिखाई देती हैं। निष्पक्षपाती रुख़ उत्पन्न हो तो मोक्ष सरल है। लेकिन खुद अपने साथ ही पक्षपात करें तो कब अंत आएगा?

कुछ लोग तो अपनी भूल को जानते हुए भी अहंकार के कारण उस भूल का स्वीकार नहीं करते, भूल को ढ़ँक देते हैं और उसका पोषण करते हैं, फिर भूल किस तरह मिटेगी? भूलों का *उपराणा* क्यों लिया जाता है? बुद्धि भूलों का रक्षण करती है, इसलिए। आबरू बचाने के लिए भूलों का रक्षण होता है। ये कितनी बड़ी भूल हो रही है, ऐसा ज्ञान जागृति के बगैर किस तरह समझ में आएगा?

पिछले जन्म के पाप के कारण आज की भूलें हैं। कोई हमारी भूल दिखाए और हम कहें कि 'उसमें कोई हर्ज नहीं है', मतलब फँस गए। 'क्रोध करना ही चाहिए, क्रोध नहीं करें तो लोग सुधरेंगे ही नहीं, आपकी समझ में ये नहीं आएगा लेकिन कहना तो चाहिए ही न? उसमें क्या बिगड़ गया, ऐसा कहने में क्या हर्ज है?' ऐसा कहकर विविध रूप से भूलों के उपराणे ले लिए जाते हैं। एक बार ऐसी टिप्पणी कर दें तो भूल समझ जाती है कि इसने मेरा बचाव किया, इसलिए फिर भूल मिटती नहीं है। फिर वह कायमी हो जाती है। उपराणा लेते समय खुद को भान नहीं होता कि ये तो मैं भूल का एक्सटेन्शन (बढ़ावा) कर रहा हूँ। यदि उपराणा नहीं लें तो भूल समय आने पर मिट जाती है।

चंदूलाल (फाइल नं-१) के नाम की कोई बात करे और सुनकर चेहरा बिगड़ जाए तो 'खुद' चंदूलाल हो गए, यह बात निर्विवाद हो गई। हम तो 'आत्मा' हैं। चंदू को और 'हमें' क्या लेना-देना? वहाँ पर असर ही नहीं हो ऐसी जागृति आनी चाहिए। इफेक्टिवनेस, सेन्सिटिवनेस चेहरे पर आ जाए, मतलब दोषों का रक्षण हो गया। इसके परिणाम रूप हमारी स्थिरता का ही भक्षण हुआ। यानी, क़दम-क़दम पर जागृति रहनी ही चाहिए।

अपने क्रोध-मान-माया-लोभ के कषाय तो भूलें करवाकर उधारी करवाए ऐसा माल है। लेकिन अब आत्मज्ञान प्राप्त करने के बाद भूलों को पोषण देकर भूलों का उपराणा नहीं लेना चाहिए, इतनी जागृति तो हम में आनी ही चाहिए न?

ज्ञानी पुरुष की कुंजी है कि भूल को मिटाने के लिए भूल को भूल कहना पड़ता है। उसका उपराणा नहीं लेना चाहिए। तो चलो, हम सब ज्ञानी के बताए हुए मार्ग पर चलकर, उनकी दी हुई कुंजी का इस्तेमाल करके, भूल रहित बनने का पुरुषार्थ शुरू कर दें।

दीपक देसाई ....

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेजी शब्द का अर्थ है अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। पाठक जहाँ पर भी चंदुभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर कोई बात आप समझ न पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधार कर समाधान प्राप्त करें। भाषांतर में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

किए रक्षण, भूलों का उपराणा लेकर

खुद के दोष क्यों नहीं दिखते?

दादाश्री : आपको खुद के दोष दिखते हैं?

प्रश्नकर्ता : वही, खुद के दोष ढूँढने की ही ज़रूरत है हमें।

दादाश्री : हाँ, लेकिन दोष दिखते क्यों नहीं हैं?

प्रश्नकर्ता : हम संसार में उलझ गए हैं, मतलब दैनिक कार्यों में उलझे हुए हैं इसलिए दोष दिखते नहीं हैं।

दादाश्री : नहीं, दिखने में कोई भूल हो रही है। खुद जज है, गुनहगार भी खुद ही है। गुनाह करनेवाला भी खुद है लेकिन साथ में वकील खड़ा किया है, और फिर खुद ही वकील बनता है।

प्रश्नकर्ता : मतलब खुद का गलत तरीके से बचाव ही करता है?

दादाश्री : हाँ, सिर्फ बचाव ही किया है। और कुछ नहीं किया है। गलत तरीके से बचाव किया है।

जगत् खुली आँखों से सो रहा है। इसलिए फिर दोष का किस तरह पता चले? तुम्हारे दोष तुम्हें दिखते नहीं है। किस तरह व्यक्ति अपने दोष देख सकता है?

प्रश्नकर्ता : स्थूल दोष थोड़े से दिखते हैं, सूक्ष्म नहीं दिखते।

दादाश्री : दोष क्यों नहीं दिखते? तब कहता है, 'भीतर आत्मा नहीं है?' तब कहें, 'आत्मा है', मतलब वह जज है और अहंकार गुनहगार है। अहंकार और जज (आत्मा) दो ही लोग हों न, तो सारे दोष दिखते हैं, बहुत से दोष दिखते हैं, लेकिन यह तो भीतर वकील (बुद्धि) रखा है। मतलब, वकील कहता है कि, 'ये सभी लोग ऐसा ही करते हैं न!' ऐसा कहने पर पूरा दोष उड़ जाता है। आपको पता है, वकील रखते हैं, ऐसा? लोग वकील रखते हैं या नहीं रखते? वकील रखते हैं, सब। खुद जज, खुद गुनहगार और खुद ही वकील। बोलो, कल्याण होगा फिर?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगा।

दादाश्री : फिर ऐसा-वैसा करके वकील सब निपटा देता है। होता है या नहीं होता ऐसा?

प्रश्नकर्ता : होता है।

दादाश्री : सारा दिन यही की यही झँझट और ये सारे दु:ख इसी की वजह से हैं। बोलो, अब जब ऐसा ही होगा तो खुद की कितनी भूलें बाहर निकलेगी? खुद की कितनी भूलों का स्टेटमेन्ट (लिखाई) देता है?

प्रश्नकर्ता : फिर क्या स्टेटमेन्ट देगा?

दादाश्री : सिर पर बाल हैं न, उतनी भूलें हैं। लेकिन खुद जज और खुद वकील और खुद ही गुनहगार, फिर किस तरह भूलें मिटेगी? निष्पक्षपाती वातावरण उत्पन्न नहीं होता न! निष्पक्षपाती वातावरण उत्पन्न हो, तो मोक्ष सरल है। मोक्ष कहीं दूर नहीं है। लेकिन पक्षपात बहुत है।

सच्चा न्यायाधीश कौन?

दूसरों की भूलें दिखती है, दूसरों के लिए खुद थोड़ा बहुत, अल्पअंश में न्यायाधीश है। लेकिन खुद की भूलें देखने के लिए बिल्कुल भी न्यायाधीश नहीं है। मतलब खुद जज, खुद ही वकील और खुद ही गुनहगार, तो फिर कैसा जजमेन्ट आएगा? खुद के फ़ायदे का ही होता है।

प्रश्नकर्ता : खुद को रास आए ऐसा, बस! खुद को रास आए न, ऐसा परिणाम ले आता है!

दादाश्री : इसलिए फिर संसार कभी भी छूटता नहीं है! एक तरफ़ आप खुद को रास आए ऐसा करते रहते हो और दूसरी तरफ़ निर्दोष होना है, ऐसा हो नहीं सकता! जब वकील नहीं हो, तो ही खुद की भूलों का पता चलता है। लेकिन आजकल के लोग वकील रखे बगैर रहते नहीं हैं न!

यह ज्ञान देने के बाद तुरन्त ही पता चलता है कि यह भूल हो गई। क्योंकि अब बीच में वकील (बुद्धि) नहीं है। वकील घर चले गए, रिटायर्ड हो गए। गुनहगार तो अभी रहा है, लेकिन वकील नहीं रहा है।

उपराणा क्यों ले लिया जाता है?

आप किसी पर अकुला जाओ तब, आपसे कोई कहे कि, 'आप बिना अक़्ल के हो, ऐसा कोई करता होगा?' तब हमें कहना चाहिए 'भाई, मेरा स्वभाव ही उल्टा है, टेढ़ा है। उसे मैं जानता हूँ। लेकिन क्या करूँ?' लेकिन आज तो, लोग किसीसे पूछें कि 'इतना ज़्यादा क्यों अकुलाते हो?' तब वो कहेगा, 'अकुलाने जैसा ही है, आपकी समझ में नहीं आएगा।' उल्टा उसका उपराणा लेता है (तरफ़दारी करता है)।

प्रश्नकर्ता : वकील को बुलाते हैं।

दादाश्री : हाँ, वकील को बुलाते हैं। हर बात में वकील को बुलाते हैं। और वकील आकर सब ठीक कर देता है! वकीलों से ही ये जगत् खड़ा रहा है। भीतर शरीर में, जज भी है, गुनहगार भी है और वकील भी है।

प्रश्नकर्ता : जज और गुनहगार दो ही रहें तो सीधा चलता है।

दादाश्री : हाँ, अच्छा चलता है। गुनहगार और जज दो ही हों तो। जज, जज का काम करता रहता है, गुनहगार, गुनहगार का काम करता रहता है। गुनहगार कहता है 'साहब, मेरी कोई भूल हो गई हो तो बताना!' तब जज कहता है 'हाँ, आपकी भूल है', इसलिए गुनहगार मान लेता है। लेकिन वकालत करी, कि बात आगे बढ़ी। हर घर में वकालत होती है। कोई घर में कुछ लोग ऐसे होते हैं ऊँचे विचार के, कि जो वकालत नहीं करने देते। दूसरी सभी जगह पर वकालत होती है। कहेंगे, 'सभी वकालत करते हैं, उसमें क्या बिगड़ गया?'

प्रश्नकर्ता : वकील को निकाल देना मतलब बचाव नहीं करना, उस अर्थ में कहा है?

दादाश्री : नहीं, बचाव करना या बचाव नहीं करना, ऐसा नहीं। वकालत करते हैं, ऐसा नहीं होना चाहिए। हमें तो भीतर से जवाब मिले कि गलत हो रहा है मतलब हमें बंद कर देना चाहिए। उस समय वकील भीतर क्या बोलता है? 'सभी करते हैं न, इसमें क्या गलत है?' वकील ऐसे सब समझाता है। आजकल के वकील तो बहुत बलवान होते हैं न और एल.एल.बी हुए होते हैं, फिर क्या कह सकते हैं?

आधार देने से खड़े हैं दोष

इस जगत् के लोगों ने खुद के दोष देखे नहीं हैं, इसलिए वे दोष रहे हैं, मुकाम करते हैं आराम से! वैसे तो कुछ लोग कहते हैं कि मुझे दोष निकालना है, लेकिन तब वे दोष एक तरफ़ नींव डालकर भीतर रहने का मकान बनाते हैं। सिमेन्ट डालकर नींव बना डालते हैं। वे दोष जानते हैं कि ये मुआ कुछ

करनेवाला नहीं है। मुँह पर बोलता है, उतना ही, किस तरह दोष निकालनेवाला है?

जो एक दोष निकाल (मिटा) सके, वह भगवान हो जाता है! एक ही दोष! एक दोष का निवारण करे वह भगवान हो जाता है। लेकिन यह तो एक दोष का निवारण करते हैं, किन्तु दूसरा दोष करके! दूसरे दोष को हयात करके पहले दोष का निवारण करते हैं। बाकी, खुद की एक भूल मिटाए तो भगवान हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : दूसरा दोष नहीं करे, यह कैसे हो सकता है?

दादाश्री : सारी भूलें ही हैं, लेकिन एक भूल कब मिटती है? समकित होने के बाद मिटती है, वर्ना नहीं मिटती, तब तक तो एक भूल नहीं मिटती। तब तक तो, पहले खोदता है और फिर भरता है। खोदता है और भरता है, खोदता है और भरता है। उसकी कोई भी क्रिया काम में नहीं आती। सारी क्रियाएँ निष्फल जाती है!

ये भूलें मिट जाएँ न, तो खुद का भगवान पद प्राप्त हो ऐसा है। इन भूलों की वजह से जीवपद है और भूलें मिट जाए तो शीवपद प्राप्त होता है।

'स्वरूप के ज्ञान' के बगैर तो भूल दिखतीं नहीं हैं। क्योंकि, 'मैं ही चंदूभाई* और मुझमें तो ऐसा-वैसा कुछ है ही नहीं, मैं तो बहुत सयाना हूँ', ऐसा रहता है। और 'स्वरूप के ज्ञान' की प्राप्ति के बाद आप निष्पक्षपाती हो गए, मन-वचन-काया पर आपको पक्षपात नहीं रहा। इसलिए आपकी खुद की भूलें आपको दिखतीं हैं।

दोष कब दिखते हैं?

ज्ञानी पुरुष के दिखाए बिना मनुष्य को अपनी भूल का पता नहीं चलता। ऐसी अनंत भूलें हैं। एक ही भूल नहीं है। अनंत भूलों ने घेर लिया है।

प्रश्नकर्ता : किन्तु ज़्यादा दोष दिखते नहीं हैं। थोड़े ही दिखते हैं।

दादाश्री : यहाँ, सत्संग में बैठने से, आवरण टूटते जाते हैं और दोष दिखते जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : दोष ज़्यादा दिखें, उसके लिए जागृति किस तरह आती है?

दादाश्री : भीतर जागृति तो बहुत है। लेकिन दोषों को ढूँढने की भावना नहीं हुई है। पुलिसवाले को चोर को ढूँढने की इच्छा होती है तब चोर मिल जाता है। लेकिन, यदि पुलिसवाला कहे कि, 'चोर को पकड़ने के लिए जाना नहीं है, दिखेगा तो पकड़ेंगे', तो फिर चोर मज़ा ही करेगा न! ये भूलें तो छुपकर भीतर बैठी हैं। उन्हें ढूँढोगे, तो तुरन्त पकड़ में आ जाएगी।

सारी कमाई का फल क्या है? आपके दोष एक के बाद एक आपको दिखे, तो ही कमाई हुई कहा जाता है। यह सारा सत्संग इसलिए है कि, खुद अपने सारे दोष देखें। और खुद के दोष दिखेंगे तो ही वे दोष जाएँगे। दोष कब दिखेंगे? जब खुद स्वयं हो जाएगा, 'स्वस्वरूप' हो जाएगा, तब। जिसे अपने दोष ज़्यादा दिखते हैं वह ऊँचा व्यक्ति है। जब इस देह के लिए, वाणी के लिए, वर्तन के लिए, संपूर्ण निष्पक्षपातीपन उत्पन्न हो, तभी खुद अपने सारे दोषों को देख सकता है।

भूल का स्वभाव कैसा?

हम अपनी भूल से बँधे हुए हैं। भूल मिटे, फिर तो परमात्मा ही हैं! जिसमें एक भी भूल नहीं है वह खुद ही परमात्मा है। यह भूल क्या कहती है? 'तू मुझे जान ले, मुझे पहचान।' ये तो ऐसा है, कि भूल को अपना अच्छा गुण मानते थे। भूल का स्वभाव ऐसा है कि वह हम पर अमल करती है। लेकिन भूल को भूल समझे, तो भूल भागती है। फिर खड़ी नहीं रहती, चलने लगती है। लेकिन लोग क्या

---

* चंदूभाई की जगह पाठक स्वयं को समझे

करते हैं कि एक तो भूल को भूल नहीं समझते और फिर भूल का उपराणा लेते हैं। मतलब भूल को घर में ही खाना खिलाते हैं।

भूलों को अपना गुण मानकर पोषण किया

कई लोग तो भूल को जानते हैं फिर भी खुद के अहंकार की वजह से उसे भूल नहीं कहते। भूल को पहचानने लगे, तो भूल मिटती है। कुछ लोग तो कपड़े की दुकान में कपड़ा खींच-खींचकर और फिर, काटकर देते हैं और फिर कहते हैं कि आज तो पाव गज कपड़ा कम दिया। इतना बड़ा रौद्रध्यान और उस पर उसका उपराणा? भूल का उपराणा नहीं लेना चाहिए। घी बेचनेवाला, किसीको पता नहीं चले उस प्रकार घी में मिलावट करके पाँच सौ रुपये कमाता है। मतलब ये तो जड़ के साथ वृक्ष को बो देता है। खुद ही खुद के अनंत अवतार बिगाड़ देता है। एक ही भूल अनंत अवतार बिगाड़ दे, यह तो पुसाए ही नहीं!

कोई 'जेब' काटे और हम उसका उपराणा ले कि 'वह क्या गलत कर रहा है? उसे खाने को नहीं मिलता, इसलिए जेब काटता है न!' अब खुद जेब नहीं काटता है लेकिन इस तरह उसका उपराणा लेता है, तो वह दूसरे जन्म में जेबकतरा बनता है! बेचारे की अंधेरे में (नासमझी में) भूल हुई है और दंड उजाले में मिलता है!

जो चोरी करता है उसे फिर से चोरी करने के बीज पड़ते हैं। यदि कोई रिश्वत लेता हो और उसे मन में चुभता रहता हो कि ऐसा नहीं करना चाहिए, नहीं करना चाहिए, ऐसा चुभता तो रहता है, लेकिन फिर कोई पूछे या घर के लोग कहें 'भाई, रिश्वत क्यों लेते हो?' तब कहेगा, 'तेरे में अक़्ल नहीं है, चुप बैठ। किस तरह दोनों बेटियों की शादी करूँगा?' मतलब खुद ने क्या किया? रिश्वत लेने को एन्करेज किया। यानी आनेवाले जन्म को मजबूत कर लिया (रिश्वत लेगा ही)।

भूल मिटाने की कुंजी

प्रश्नकर्ता : अभी (इस जन्म में) भूल होती है वह क्या पिछले जन्म की है?

दादाश्री : पिछले जन्म के पाप की वजह से ही ये भूलें हो रहीं हैं। लेकिन, इस जन्म में भूल को मिटाते ही नहीं और बढ़ाते जाते हैं। भूल को मिटाने के लिए तो, भूल को भूल कहना पड़ता है। उसका उपराणा नहीं लेना चाहिए। इसे ज्ञानी पुरुष की कुंजी कहते हैं। इससे तो कोई भी ताले खुल जाते हैं (कोई भी भूल मिट जाती है)।

कोई हमें हमारी भूल दिखाए तो हम तुरन्त ही एक्सेप्ट कर लेते हैं। कोई कहे कि, 'यह आपकी भूल है।' तो हम कहते हैं कि, 'हाँ भाई, तूने हमारी भूल दिखाई इसलिए तेरा उपकार।' हम तो समझ जाते हैं कि जो भूल हमें दिखती नहीं थी, उस भूल को उसने बता दिया, इसलिए उसका उपकार मानते हैं। यदि रोज़ पच्चीस जितनी भूलें समझ में आए तो फिर अद्‌भूत शक्ति उत्पन्न होती है। 'भूल क्या है' यह समझ में आए, इसलिए हमने कहा है न कि, 'भुगते उसकी भूल।' भुगता, मतलब भूल तुम्हारी। तुम्हारी जेब कटे और तुम दूसरे को गाली दो तो उससे भूल को एक्स्टेन्शन मिलता है। भूल समझ जाती है कि ये तो मुझे खिलाने (पोषने) की ही बात करता है। फिर भूल मिटती नहीं।

करता है रक्षण, 'मैं सच्चा हूँ' कहकर

जो (अपने) नाम का रक्षण करता है, वह अनामी का अक्षर भी समझा नहीं है। मुआ, थोड़ा कुछ समझा होता फिर भी ठीक था। एक शब्द भी समझा नहीं है। क्या नाम का रक्षण करते हैं, बापजी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, नाम का ही रक्षण करते हैं।

दादाश्री : यदि आप नाम का रक्षण करो, तो हम समझ जाते हैं कि यह रक्षण कर रहा है। लेकिन, थोड़ी देर बाद कहेगा कि 'नहीं, वह गलत था।'

लेकिन बापजी, 'गलत है' ऐसा नहीं कहते, ऐसा क्यों? क्योंकि उनको लगता है कि मैं सच्चा ही हूँ।

प्रश्नकर्ता : 'गलत हैं' ऐसा कहेंगे तो उनकी विशेषता कम हो जाएगी न?

दादाश्री : कहते ही नहीं न, बोलते ही नहीं न! इस दुनिया में, 'मैं गलत हूँ' ऐसा कौन बोलता है? जो एकदम सच्चा हो वो ही ऐसा बोलता है। बाकी तो सब अंडरग्राउन्ड, ढँका हुआ ही रखते हैं (छुपाते हैं)। हम पूछें कि 'साहब, कभी मन से भी चोरी की है?' तब कहते हैं 'नहीं, ऐसा कुछ नहीं किया है।' और हम तो कह देते हैं कि, 'हम जिस पर बैठे हैं न, उस बेंच को हम चुराकर लाए थे।' तब कहें, 'ऐसा किसलिए कह देते हैं?' क्योंकि इससे आपको भी हिम्मत आएगी और आप भी दूसरे लोगों से कह सकोगे कि 'भाई, यह मैंने चुराया है।' ऐसा खुला बोल सको न, इसलिए! हृदय खुला हो जाता है, हल्का हो जाता है। लेकिन कोई ऐसा क़बूल ही नहीं करता न! किस कारण से क़बूल नहीं करते होंगे? ऐसा सोचते हैं कि बंद मुट्ठी में जो है वह खुला हो जाएगा, सबको पता चल जाएगा। लेकिन है ही कहाँ? दिखाओ तो सही। इस मुट्ठी में क्या है? क्या पता चल जानेवाला है? आए बड़े!

प्रश्नकर्ता : दादा, आप कहते हो कि मुट्ठी में कुछ नहीं है लेकिन, लोग तो ऐसा ही मानते हैं कि मुट्ठी में ही सबकुछ है।

दादाश्री : दूसरा कोई नहीं मानता। अपने मन में ऐसा मान लिया है, उतना ही। कोई पूछता है? गलत, पोलम्पोल चलता होगा क्या? इसलिए हम कह देते हैं कि हम ये बेंच चुराकर लाए हैं? क्यों कह देते हैं? आप में हिम्मत आए इसलिए कह देते हैं। आप सब सोचेंगे कि दादा सच बोल देते हैं तो हमें भी बोल देना चाहिए। ऐसे करते-करते सब राह पर आ जाते हैं। खुद के दोष बोल देने में, कह देने में हर्ज क्या है? ओपन टु स्काय कर डालो। ओपन टु स्काय कर डालो न! हर्ज क्या है? जल्दी बिक जाएगा न, हमारा माल? बेच देना है फिर भी उसे स्टोक में दबाते रहते हैं। कब तक दबाते रहना चाहिए? ऑन ओक्शन, ऑन ओक्शन करें तो फिर क्या होगा? कहाँ तक दबाकर रखना है हमें? एक बार बेच दिया तो निबेड़ा आ गया। बेचना नहीं चाहिए?

प्रश्नकर्ता : बेचना चाहिए।

दादाश्री : कभी न कभी तो ये माल दुकान में से निकाल ही देना पड़ेगा न, दुकान खाली करने लगे हैं, इसलिए!

मतलब, छोड़ देना है। अब हमारे हाथ में लगाम आ गई है। पतंग की डोर हमारे हाथ में आ गई है इसलिए अब हर्ज नहीं है। 'आपको जो ले जाना है, वो ले जाओ', अब ऐसा कहना चाहिए। डोर हमारे हाथ में आ गई है। छलाँग लगाएगा, तो खींचेगे, तुरंत राह पर आ जाएगा। और जब डोर हाथ में नहीं थी तब छलाँग लगाए तो? चिल्लाने से कुछ होनेवाला था?

भूल मिटाने की मशीन

आपके मामा का बेटा हो, और वह गलत रास्ते से वापस नहीं आता हो और उसे आप सीखाने जाओ, तो भी नहीं हटता। आपके साथ बात करते समय सारी भूलें क़बूल करता है। एक मशीन ऐसा होता है जो भूलों को मिटा डालता है, उससे मनुष्य चोखा हो जाता है। लेकिन आपके मामा के बेटे ने जो भूलें क़बूल की हैं न, उसे मिटाने का मशीन उसके पास नहीं है। आप बताएँ और उसे समझाएँ तो वह कहता है कि 'ऐसी भूल हुई, ऐसी भूल होती है, वैसी भूल होती है।' लेकिन आप वापस आ जाएँ तो उसे भूल को मिटाना नहीं आता। तो क्या होगा? भूलें खतम नहीं होगी।

प्रश्नकर्ता : सामान्य तौर पर ऐसा ही होता है।

दादाश्री : ऐसा ही होता है न! सारे घाव भर जाएँ ऐसी दानत होती है। ऐसा ही चलता है!

प्रश्नकर्ता : मतलब दादा, उसका अर्थ ऐसा निकाल सकते हैं कि प्रकृति उसका बचाव करती है, आधार देती है।

दादाश्री : प्रकृति का तो स्वभाव ही ऐसा है। यदि हम कभी (जागृत) नहीं रहें तो प्रकृति तो अपने आप अपना बचाव कर ही लेगी।

प्रकृति के उपराणों का परिणाम

प्रकृति ख़राब हो और उसका बचाव किया तो मनुष्य प्रकृति के पक्ष में चला गया। उपराणा लेने से प्रकृति बढ़ जाती है। प्रकृति का पलड़ा भारी हो जाता है, इसे प्रकृति पर राग हुआ कहलाता है। उपराणा लेना, मतलब प्रकृति पर राग। बचाव करने को भी राग कहते हैं। उपराणा लिया जाता है न, वह तो भयंकर गुनाह है। उसे (भूल को) ढँके (छुपाए) तो भी उपराणा, उसे भी गुनाह कहते हैं। दादा ने कहा कि, 'यह गलत है', इसलिए आपको भी कह देना चाहिए कि, 'हाँ भाई, गलत है।' अपना बचाव करने के लिए आप दूसरे शब्दों का इस्तेमाल करें, वकालत करें तो वह गुनाह है।

प्रश्नकर्ता : मतलब प्रकृति का पोषण नहीं करना चाहिए, रक्षण नहीं करना चाहिए?

दादाश्री : हाँ, रक्षण नहीं करना चाहिए इसका मतलब क्या है, कि आत्मा होने के बाद प्रकृति का उपराणा लें तो गलत कहलाता है न! उपराणा लें फिर तो उसीके पक्ष के ही हो गए। प्रकृति का बचाव करके, उपराणा लेकर ही ये मुश्किलें खड़ी हुई हैं।

प्रश्नकर्ता : दादा, भूल का उपराणा किस तरह ले लिया जाता है?

दादाश्री : हम किसी को डाँटने के बाद कहें कि, 'हमने उसे डाँटा नहीं होता तो वह समझता ही नहीं, इसलिए उसे डाँटना ही चाहिए।' इससे तो 'भूल' समझे कि इस भाई को मेरा अभी पता नहीं है और फिर मेरा उपराणा लेता है। इसलिए यहीं पर खाओ, पीओ और रहो। एक ही बार यदि अपनी भूल का उपराणा ले लिया जाए तो उस भूल का बीस साल का आयुष्य बढ़ जाता है। किसी भी भूल का उपराणा नहीं लेना चाहिए।

खुद की कमज़ोरी ज़ाहिर करे तो

कोई साहब सूँघनी सूँघते हों, उनसे हम पूछें कि 'साहब, यह सूँघनी किस लिए नाक में घूसाई है?' तो वह कहेता है, 'उसमें कोई हर्ज नहीं है। कोई खास फ़र्क नहीं पड़ता।' तब मैं वहाँ पर बैठा था, तो मैंने कहा कि, 'ओहो, ऐसा कहकर तो आपने इस आदत को (बीस साल) का एक्सटेन्शन दे दिया। यह आपकी सूँघनी तो बहुत पुण्यशाली है!' साहब को पता नहीं है कि यह मैं एक्सटेन्शन कर रहा हूँ, या फिर किसका बचाव कर रहा हूँ!

इसलिए साहब बीच में फँस गए। तू पी न, पीने में हर्ज नहीं है। लेकिन तू जैसा है वैसा कह दे कि, 'ये पीने जैसी चीज़ नहीं है। मेरी पीने की इच्छा भी नहीं है। फिर भी पीया जाता है।' और हज़ार लोगों के बीच पब्लिक में कोई तुम्हारी आबरू बिगाड़ता हो तो भी कह दे कि, 'भाई, ये मेरी कमज़ोरी है।' जो खुद की कमज़ोरी ज़ाहिर करता है, वह मूल जगह पर पहुँच जाता है। ख़ानगी में तो हर कोई कमज़ोरी को ज़ाहिर करता है।

प्रश्नकर्ता : वो सूँघनी सूँघता है और बीड़ी छोड़ने की बात करता है।

दादाश्री : 'सूँघनी में हर्ज नहीं है', कहता है। हम समझ गए, कि जो हर्ज भगवान को था वो हर्ज भी इसे नहीं है। 'सूँघनी में हर्ज नहीं', कहता है। और ये भी पता नहीं है कि सूँघनी सुन लेगी तो क्या होगा? परमानेन्ट हो गई। ऐसा एक बार सिक्का लगा दिया कि 'सूँघनी में हर्ज नहीं है', मतलब सूँघनी

परमानेन्ट हो गई। और फिर छोड़ने की बातें करता है। किस तरह छूटेगी मुआ? तूने तो हस्ताक्षर कर दिए, परमानेन्ट!

भूल के आयुष्य बढ़े, उपराणा लेने से

उपराणा लूँ, तो एक्सटेन्शन मिलता है। यह मैं जानता हूँ इसलिए मैं एक क्षण के लिए भी उपराणा नहीं लेता। कोई उल्टा-सीधा पूछे तो भी उपराणा नहीं लेना चाहिए। आप किस चीज़ का उपराणा लेते हो?

प्रश्नकर्ता : उपराणा नहीं लेते, लेकिन चाय पीते हैं।

दादाश्री : चाय से मुझे हर्ज नहीं है। चाय पीओ न। दस कप पीओ, चाय का हर्ज नहीं है, लेकिन उपराणा मत लो।

प्रश्नकर्ता : उपराणा नहीं लें तो, पी सकते हैं?

दादाश्री : कोई हर्ज नहीं है, हाँ।

और हम इसे डिस्चार्ज है ऐसा नहीं कह सकते। हमें यह डिस्चार्ज है लेकिन उसे (ज्ञान नहीं लिया है उसे) चार्ज है।

गलत को गलत जानो, और उपराणा मत लो

प्रश्नकर्ता : दादा, मुझे सिगरेट पीने की बुरी आदत पड़ गई है।

दादाश्री : इस आदत को 'तू' इस तरह से रखना कि यह गलत है, ख़राब वस्तु है। और कोई कहे कि, 'सिगरेट क्यों पीते हो?' तो उसका उपराणा मत लेना। 'ख़राब है', ऐसा कहना। 'भाई, मेरी कमज़ोरी है', ऐसा कहना। तो कभी छूट जाएगी। वर्ना यह आदत नहीं छोड़ेगी। छोड़ने का प्रयत्न करते हो?

प्रश्नकर्ता : प्रयत्न करता हूँ, लेकिन छूटती नहीं है।

दादाश्री : नहीं। ऐसे प्रयत्न नहीं करने है। हमें तो उसका उपराणा नहीं लेना है। कोई कहे कि, 'सिगरेट छोड़ दो न।' तब तुम कहो कि, 'नहीं भाई, हमें छोड़ने की ज़रूरत नहीं है', ऐसा-वैसा उपराणा तुम ले लेते हो। अपमान होता है तब वहाँ पर पिघलनेवाला था, तब तू ऐसा कहे कि 'नहीं, सिगरेट पीनी चाहिए', तो क्या होगा? वह आदत जाएगी नहीं। इस आदत को हमेशा, 'यह वस्तु गलत है' ऐसे मानते रहना। तो फिर एक दिन छूट जाएगी।

समझ से आए निबेड़ा

बात समझ में आने के बाद आदत छूट ही जानी चाहिए। वर्ना, गलत है ऐसा समझ में आना, किसे कहते हैं? फिर भी पी ली जाती है, लेकिन ख्याल में रहना चाहिए कि यह गलत ही है। बीड़ी छोड़नी हो तो किस तरह छोड़ सकते हो?

प्रश्नकर्ता : 'गलत है' ऐसा समझ में आ गया, तब से।

दादाश्री : गलत है, ऐसा भूलना नहीं चाहिए। और उपराणा नहीं लेना चाहिए। लोग उपराणा लेते हैं?

प्रश्नकर्ता : लेते हैं न।

दादाश्री : कब? जब उसकी (बीड़ी की) क़िमत ज़्यादा हो न तब। हम कहें कि 'बिड़ियाँ पीते हो?' मैं बोल रहा होऊँ और यदि हज़ार लोग उपदेश सुन रहे हों, तब मुझसे कोई कहे, 'बीड़ी पीते हो, आपको यह शोभा देता है?' फिर तुरन्त मैं बीड़ी का रक्षण करूँ कि 'बीड़ी पीने में हर्ज नहीं है', मतलब भीतर बीड़ी पीने की आदत समझ जाती है कि 'यह कमज़ोर व्यक्ति है, इसके पास रहो और बीस साल का एक्सटेन्शन लो।' यानी वैसे मुद्दत तो होती ही है (आदत की), मुद्दत लेकर ही आया है, पर बीस साल का एक्सटेन्शन मिल गया।

प्रश्नकर्ता : मतलब बीड़ी पीने की मुद्दत बढ़ गई, ऐसा?

दादाश्री : क्योंकि मैंने ऐसा बोला (उपराणा

लिया), इसलिए बढ़ गई। यदि गलत है तो उसके लिए हज़ार लोगों के बीच क्या कहना चाहिए? कि 'भाई, यह तो मुझमें कमज़ोरी है, इसे तो मुझे निकालना ही है। सही बात है।' एक्सेप्ट किया, मतलब उसका टाइम आने पर उड़ जाता है। उसका टाइम मुद्दतमय होता है। उस टाइम पर उड़ जाता है, टाइम से पहले नहीं होता। मैं क्या कहना चाहता हूँ, वह आपकी समझ में आया?

प्रश्नकर्ता : हाँ, भूल का उपराणा नहीं लेना चाहिए।

दादाश्री : उपराणा नहीं लो, तो उसके टाइम पर उड़ जाता है। वक्त आने पर वह आदत छूट ही जाती है।

व्यसन से ऐसे हो सकते हैं मुक्त

'मुझे पसंद है' ऐसा कहकर सिगरेट के साथ ब्याह कर लिया। 'नहीं पसंद है' ऐसा कहकर छूट जाओगे। पाँच-दस दिनों में एक लाख बार बोल देना चाहिए। दिन में एक घंटा और शाम को एक घंटा, ऐसे मिलाकर दो घंटे, लेकिन आराम से बैठकर बोलना चाहिए, सिगरेट को सामने रखकर कि 'अब मुझे इसे नहीं पीनी है, मुझे नहीं पीनी है, मुझे नहीं पीनी है......'

प्रश्नकर्ता : दादाजी, इस तरह सामने रखकर किया हो तो कोई भी व्यसन एक लाख बार बोलने से छूट जाता है?

दादाश्री : सब छूट जाता है, इस तरह करने से तो।

पचहत्तर हज़ार बार आपने बोल लिया हो, और अब बाकी के पच्चीस हज़ार बार बोल लें तो छूटने की तैयारी हो! तब कोई कहे कि 'सिगरेट तो छूटती नहीं है, फिर दादा के भक्त कैसे बन गए हो?' तब आप कहो कि, 'सिगरेट पीने में कोई हर्ज नहीं है।' 'हर्ज नहीं है' कहते ही फिर से सब सजीवन हो गया।

प्रश्नकर्ता : नहीं, लेकिन हम ऐसा नहीं कहेंगे। ऐसा कहेंगे कि 'हम छोड़ने की तैयारी में ही हैं', तो?

दादाश्री : हाँ, 'यह तो हमारी कमज़ोरी ही है और यह कमज़ोरी मेरी नहीं है', कहना चाहिए। 'यह हमारी (फाइल नं-१ की) कमज़ोरी है, लेकिन मेरी नहीं है' ऐसा लगातार बोलते रहना चाहिए। थोड़ा-सा इधर-उधर बोलें तो नहीं चलेगा। उसका रक्षण करें तो भी नहीं चलेगा। अपनी आबरू बचाने के लिए उसका रक्षण हो जाता है।

मत करो रक्षण निर्बलता का

प्रश्नकर्ता : किसी वस्तु को 'यह तो निकाली है' ऐसा करके भी हम उसे पोषण देते हैं न?

दादाश्री : हाँ, पोषण दिया। लेकिन जब, 'यह मेरी कमज़ोरी है' ऐसा कहते हैं, तो वहाँ रक्षण नहीं देने के कारण वह आदत फिर से जीवित नहीं हो जाती।

खुद की निर्बलता का रक्षण करने के बजाय, उसे सिर्फ जानो कि यह मेरी कमज़ोरी है। तो वह कमज़ोरी क्षीण हो जाएगी। और यदि इसके विरूद्ध होंगे तो उस कमज़ोरी का गुणाकार हो जाता है।

उपराणा नहीं लें तो आए अंत

लोग उपराणा लेते हैं। हर एक वस्तु का, क्रोध का उपराणा नहीं लें, किसी भी वस्तु का उपराणा नहीं लें तो एन्ड आता है। लोग उपराणा लेते हैं या नहीं? हाँ, उपराणा लेने से उस वस्तु का आयुष्य बढ़ जाता है। गुरु, शिष्य पर गुस्सा हुए हों, बहुत ज़्यादा गुस्सा हो गए हों, फिर गुरु की भी समझ में आ जाए कि 'अरे, आज तो मैंने बहुत ज़्यादा गुस्सा कर दिया।' तब कोई पड़ोसी आकर कहे, 'अरे गुरुदेव, शिष्य पर इतना ज़्यादा गुस्सा क्या ठीक है?' तब गुरुदेव कहे, 'गुस्सा करने जैसा ही है।' लो देखो......तू खुद जानता है कि 'आज बहुत ज़्यादा गुस्सा हो गया', फिर भी तू ऐसा बोल रहा है? मतलब, क्रोध का उपराणा लेता है। फिर क्रोध बढ़ता जाता है।

इसी तरह भीतर घर कर लिया है न, क्रोध-मान-माया-लोभ ने। इसी तरह खुराक देने की वजह से घर कर लिया है न? 'आपको पता नहीं है, वो शिष्य है ही ऐसा, क्रोध करने जैसा ही है', ऐसा बोले। मतलब उस घड़ी महाराज क्रोध को दाल, चावल, पूरनपोली, सब्जी सब खिलाते हैं।

'तुझे भाता नहीं हो तो ला चटनी भी बना दूँ', कहते हैं। फिर कोई क्रोध जाएगा भला? और फिर रोज़ कहते हैं, 'मुझे क्रोध-मान-माया-लोभ को निकालना है।' तो फिर क्रोध-मान-माया-लोभ भी साथ में मिलकर बोलते हैं कि, 'यह मूर्ख ही है न! किसे निकालना है और किसे खिला रहा है, पता ही नहीं है न!'

भूलचूक से साधु लोग भी ऐसे खाना खिलाते हैं या नहीं खिलाते? आपको ऐसा लगता है न? बड़े-बड़े आचार्य लोग भी खाना खिला देते हैं। बड़े आचार्य लोग बड़ी थाली खिला देते हैं। क्योंकि उनमें अहम ज़्यादा होता है न, इसलिए आपसे कहेंगे, 'आप में अक़्ल नहीं है, आप नहीं समझोगे, वह तो घनच्क्कर व्यक्ति है। उसके साथ तो ऐसा ही करने जैसा है।'

खिलाए राज़ी-खुशी से

साधु लोग रोज़ क्रोध-मान-माया-लोभ को खाना खिलाते हैं और उन्हें बड़ा करते हैं और फिर कहते हैं कि 'मुझे उनको निकालना है।' ऐसा विरोधाभास चलता है। आपकी समझ में आता है यह साइन्स?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : कैसे समझ में आया ये मुझे कहो। किस तरह खिलाते होंगे?

प्रश्नकर्ता : उनका पोषण करके।

दादाश्री : नहीं, वो तो निकालने की सोचते हैं।

प्रश्नकर्ता : वहाँ पर उनकी नासमझी है, अभी भी समझने की दशा नहीं आई है।

दादाश्री : महाराज को निरंतर याद आता रहता है कि किसी भी तरह अब इस क्रोध को निकालना है। वो निकालने की सोचे उससे पहले तो क्रोध जागृत हो गया होता है। क्रोध कहता है कि 'तू मुझे निकालता है? मैं तुझे निकालता हूँ, तू देखता रहे।' यदि क्रोध को खुराक दे, खाना खिलाए तो फिर वह तो हमेशा के लिए दिन-ब-दिन बड़ा ही होगा न! राज़ी-खुशी से खिलाते हैं। ऐसा होता होगा?

प्रश्नकर्ता : राज़ी-खुशी से, यह शब्द समझ में नहीं आया?

दादाश्री : हाँ, राज़ी-खुशी से खिलाते हैं। राज़ी-खुशी से मतलब खुद ऐसा मानते हैं कि इसको कभी भी खिलाना ही नहीं है, लेकिन उनकी अज्ञानता के कारण वह (क्रोध) खा लेता है। 'आपको पता नहीं है, क्रोध तो करने जैसा ही है', कहते हैं। उस घड़ी क्रोध समझ जाता है कि यह तो अपना ही वकील है। यह घनचक्कर समझता नहीं है, लेकिन वकील तो हमारी ही वकालत करनेवाला है।

क्रोध जानता है कि हमारा सबसे अच्छा वकील, ऐसा वकील मिलेगा नहीं! मुझे निकालना चाहता है फिर भी, देखो वकालत करते समय मेरी ही वकालत करता है। इसे प्रतिवादी का वकील कहते हैं। प्रतिवादी के वकील वादी के पक्ष में बोलते हैं।

प्रतिवादी का वकील वादी के पक्ष में बोले तो कोर्ट में सब लोग हँसते हैं न? कोर्ट में तो जज भी समझ जाता है कि यह किस तरह का खेल है?

अब ऐसी सूक्ष्म बात लोगों की समझ में कैसे आएगी? जिस क्रोध को निकालना है उसे ही खिलाता है।

क्रोध-मान-माया-लोभ को रोज़ साधु-आचार्य तो खिलाते ही हैं, लेकिन पब्लिक भी रोज़ खिलाती

है। खिलाए बगैर नहीं जाने देती। क्योंकि खानदानी प्रजा है न! क्रोध को भी कहेंगे, 'तुम खा लो, भाई। फिर दूसरी बातें करेंगे।'

इन्टरेस्ट (रूचि) या अज्ञानता?

प्रश्नकर्ता : यह जो खाना खिलाते हैं वह खुद को इन्टरेस्ट आता है या अज्ञानता है?

दादाश्री : इन्टरेस्ट आता है। अज्ञानता तो कहाँ रही है? इन्टरेस्ट आता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर खुद क्रोध को किस आधार पर निकालने के लिए तैयार हुआ है?

दादाश्री : इन्टरेस्ट आता है न, उसकी वजह से थोड़ी अज्ञानता रहती है। क्या परिणाम आएगा यह पता नहीं है।

प्रश्नकर्ता : एक तरफ़ खुद क्रोध को निकालने के लिए सोचता है और दूसरी तरफ़ इन्टरेस्ट है, तो ये किस तरह का है?

दादाश्री : उसे पता नहीं है, इसलिए। पूरे जगत् में, सबको बहुत कुछ निकालना है, फिर भी खुद इन्टरेस्ट रखता है। सारा जगत्, भिखारी-भिखारिन, साधु-साध्वी सभी लोग, कम-ज़्यादा मात्रा में इन्टरेस्ट रखते हैं। अपने महात्मा लोग भी। उनको आप लोगों (महात्मा लोगों) से थोड़ा ज़्यादा इन्टरेस्ट होगा, उतना ही। बाकी, यही क्रिया में पड़े हैं सब लोग। सिर्फ हम ही हैं, जो मना कर देते हैं। हम कभी प्रोटेक्शन नहीं देते। खिलाया नहीं है। खिलाया नहीं है, इसलिए तो सभी गद्दी छोड़कर चले गए न।

बंद करो कषाय का पोषण

लोग तो क्या करते हैं? बेटे को बहुत झिड़काते हैं। बेटा उम्र में थोड़ा बड़ा हो, उस पर बहुत गुस्सा हो जाते हैं। और फिर मन में होता है कि 'अरे, ज़्यादा बोल दिया है।' ऐसा फिर अपने थर्मोमीटर से समझ जाते हैं। लेकिन फिर, यदि कोई पड़ोसी आकर कहे, 'चंदूभाई, इतना ज़्यादा गुस्सा क्यों करते हो?' तब चंदूभाई क्या कहते हैं? 'आप उसे जानते नहीं हो?' ऐसे, पोषण दे दिया। खुद समझते थे कि 'ज़्यादा बोल दिया है', तो वहाँ पड़ोसी को कहने में क्या हर्ज है? कि 'भाई, ज़्यादा बोल दिया। भूल हो गई।' इतना कहें तो फिर क्रोध को खुराक नहीं मिलती, भूखा रहता है। लेकिन आप तो खिलाते हो। 'आराम से खा। मेरी आबरू नहीं जाए तो अच्छा, तू खा', कहते हैं। इसलिए क्रोध खा लेता है न! (एक तरफ़) खाना भी खिलाना है और (एक तरफ़) निकालना भी है। आपकी समझ में आता है, लोग खिलाते हैं?

प्रश्नकर्ता : दादा, ये तो बहुत सूक्ष्म बातें हो रही है।

दादाश्री : ऐसी सूक्ष्म बातें कहीं नहीं हो सकती। ये बातें पुस्तक में नहीं होती और कहीं नहीं होतीं। ये सब तो मुझे अपने ज्ञान में दिखाई देता है।

आपकी समझ में ये सारी सूक्ष्म बातें आती हैं? ज्ञानी पुरुष ही समझ सकते हैं कि ये किसकी वकालत की।

उन्होंने (चंदूभाई ने) किसकी वकालत की? क्रोध का बचाव किया। उस वक्त उन्हें क्या कहना चाहिए? यदि क्रोध को भूखा मारना हो, तो कहे 'भाई, गलत हो गया। मुझे पछतावा हो रहा है।' ऐसा कहा हो, तो क्रोध समझ जाता है कि 'हमारी वकालत करता नहीं है। इसलिए अब तो यह घर खाली करना पड़ेगा। रेन्ट पर रहने का क़ायदा हो या नहीं हो लेकिन यहाँ से तो अब खाली करना ही पड़ेगा ऐसा मुझे यक़ीन हो गया है', कहेगा। अब आपको क्रोध का बचाव नहीं करना है। उल्टा, जिस व्यक्ति को आपसे दुःख हुआ है, उसके नाम का प्रतिक्रमण करना है। क्योंकि क्रोध-मान-माया-लोभ तो खतम हो गए हैं।

प्रश्नकर्ता : दादा, एक तरफ़ आपने कहा कि

इस लट्टू को कुछ नहीं करना है, और दूसरी तरफ़ आप कहते हो कि इस लट्टू को बहुत सारे निबटारे करने हैं।

दादाश्री : हाँ, बहुत सारे निबटारे करने हैं।

प्रश्नकर्ता : इस लट्टू को तो बहुत सारे निबटारे करने हैं। क्योंकि, सिर्फ चाय-बीड़ी का व्यसन नहीं है, सिर्फ चाय-बीड़ी पीने के भाव नहीं किए हैं।

दादाश्री : नहीं, दूसरे सब......

प्रश्नकर्ता : ऐसे बहुत से भाव किए हैं।

दादाश्री : भाव किए हैं, लेकिन मेरा यह कहना है कि अब इसके बारे में क्या करना चाहिए? उन्हें जीवन मत दो। फिर से, एक्सटेन्शन मत दो।

प्रश्नकर्ता : एक्सटेन्शन देने से चार्ज होता है, नया चार्ज होता है?

दादाश्री : नहीं, इस बात में चार्ज या डिस्चार्ज नहीं होता, एक्सटेन्शन मिल जाता है। एक्सटेन्शन मतलब, अगर पाँच लोगों के बीच में आपको कोई कुछ कहे, तो आप कहते हो कि 'आपका क्या जाता है?' हमें कहना चाहिए कि, 'भाई, बराबर है।' एक्ज़ेक्ट कहने में हर्ज क्या है? यदि संसार व्यवहार में कहते हों तो थोड़ी-सी तकलीफ़ होती है, लेकिन ज्ञान लेने के बाद तो अहंकार चला गया है, अब हर्ज भी क्या है?

प्रश्नकर्ता : दादा, एक्सटेन्शन का दूसरा अर्थ यह है कि जो डिस्चार्ज हो रहा था, वह डिस्चार्ज रुक गया और उसका जीवन बढ़ गया।

दादाश्री : वो आप चाहे जैसा समझो, लेकिन इस तरह से समझो तो अच्छा है। एक्सटेन्शन मिल गया, इस तरह समझो तो अच्छा है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि यह बात तो क़दम-क़दम पर बहुत सारी बाबतों में लागू होती है।

दादाश्री : मेरे कहने का मतलब यह है कि इस बात को फ़िट कर लेना न!

भूल रहित होना हो तो

किसी व्यक्ति को भूल रहित होना हो, तो उस व्यक्ति से हम कहते हैं कि सिर्फ तीन साल तक क्रोध-मान-माया-लोभ को खुराक मत देना। तो सब मुर्दे जैसे हो जाएँगे। भूलों को यदि तीन ही साल खुराक नहीं मिले, तो वे घर बदल देते हैं। दोष अर्थात् क्रोध-मान-माया-लोभ का उपराणा। यदि तीन ही साल के लिए कभी भी उपराणा नहीं लिया, तो वे भाग जाते हैं।

लोग तो क्रोध-मान-माया-लोभ को ही संजोया करते हैं। कोई गाली दे तो भी उल्टा उपराणा लेते हैं। हमें कोई गाली दे, उस वक्त जो गुस्सा आता है, उस गुस्से का खुद उपराणा लेते हैं। यदि उस गुस्से से कहें कि, 'सहन कर, किसलिए तू गुस्सा हो रहा है?' मतलब उपराणा नहीं लें, तो अभी राह पर आ जाए। लोग उपराणा लेते हैं? उल्टा खुद के गुस्से का उपराणा लेते हैं, नहीं लेते? गुस्से को संजोया करते हैं। ऐसे आपने कभी गुस्से को संजोया था? यही काम किया है आज तक! क्रोध-मान-माया-लोभ को खाना खिलाया था और कहते हैं, 'मुझे इनको निकाल देना है।'

क्रोध-मान-माया-लोभ किसे कहते हैं कि इस देह के, इस प्रकृति के चार गुण हैं। राग को आकर्षण, मतलब लोभ को आकर्षण कहते हैं। आकर्षण और विकर्षण। और क्रोध को उग्रता कहते हैं। यानी, ये प्रकृति के परमाणु ही हैं। उसके अंदर, इस जगत् के लोगों का आत्मा तन्मयाकार हो जाता है, उसे अज्ञानी का क्रोध कहते हैं। आप अब ज्ञाता-दृष्टा के तौर पर रहो। उग्रता हो और आपकी उग्रता से सामनेवाले को दु:ख हुआ हो, उसका आप प्रतिक्रमण करो। सामनेवाले को दु:ख तो होना ही नहीं चाहिए न! हमारी ही पहले की भूल है न! उस

उग्रता की जिम्मेदारी तो हमारी ही है न! उग्रता ज़्यादा हो या कम हो, लेकिन उसकी जोखिमदारी तो हमारी ही है न!

मतलब, इस देह के जो चार गुण हैं, वे नपुंसक हैं। न्युट्रल हैं। यदि आत्मा (व्यवहार आत्मा) उसमें मिल जाए तो सजीव हो जाते हैं। लेकिन आत्मा ज्ञाता-दृष्टा रहे तो सब उड़ गया (खतम हो गया)।

प्रश्नकर्ता : आत्मा मिल जाए तो होता है, वर्ना नहीं होता?

दादाश्री : आत्मा उसमें मिला नहीं हो, तो उसे क्रोध कहा ही नहीं जाता। क्योंकि मैं भी जब काम पर जाता हूँ न, वहाँ पर ऊँची आवाज़ में बोलता भी हूँ, सब करता हूँ, लेकिन फिर भी मज़दूर समझ जाते हैं कि हमारे सेठ करुणावाले हैं। अंदर से वो लोग समझ गए थे। लेकिन हम बोलते थे। कषायवाला नहीं बोलते थे। 'भाई, हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? क्या पिछले जन्म में हमने आप के पैसे ले लिए हैं या कुछ खा लिया है कि आप ऐसा करते हो? काम के बगैर बैठे क्यों रहते हो? ऐसे ही बैठने के पैसे नहीं लेने चाहिए', ऐसा-वैसा बोलते थे। ऐसा सब बोलना तो पड़ता है। व्यवहार में बोलना पड़ता है। व्यवहार किसे कहते हैं? 'कषाय रहित' बोलो। जिसमें कषाय नहीं हो, ऐसा बोलो। क्रोध-मान-माया-लोभ, उसे कषाय वाणी कहते हैं।

रक्षण करने से ही खड़ा रहा यह जगत्

वाणी के कारण ही यह जगत् खड़ा रहा है। यदि वाणी नहीं होती तो यह जगत् ऐसा नहीं होता। अर्थात् वाणी ही मुख्य आधार है।

वाणी बोलो उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन, 'हम सच्चे हैं' ऐसे उसका रक्षण नहीं करना चाहिए। 'हम सच्चे हैं' उसी को रक्षण किया कहते हैं और रक्षण नहीं होता तो कुछ भी नहीं होता।

अनंत अवतार किसका रक्षण किया?

मौन ही हो जाना है। वाणी तो बोलना ही मत। इस काल की वाणी तो पागल है। बोलने के साथ ही पागलपन बाहर आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : फिर तो बोलना चाहिए न? बाहर पता चल जाए यह तो अच्छी बात है न?

दादाश्री : नहीं। यह गलत है। ज्ञान लेने के बाद तो बोलने जैसा रहता ही नहीं है। 'यह ज्ञान' ही ऐसा प्रकाशमय है कि बोलने की ज़रूरत ही नहीं रहती।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वातावरण ही ऐसा होता है इसलिए कभी बोल दिया जाता है।

दादाश्री : बोल दिया जाए तो, हमें कहना चाहिए कि, 'चंदूभाई का दिमाग़ थोड़ा गरम ही है।' हमें चंदूभाई के बारे में उल्टा बोलते रहना चाहिए। चंदूभाई के साथ प्यार रहा नहीं है न आपको, या बहुत प्यारे लगते हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : तो फिर हक़ीक़त कह देनी चाहिए। 'चंदूभाई' 'आपसे' अलग हैं, इस तरह आपको बात करनी है।

प्रश्नकर्ता : 'चंदूभाई' का हथियार उठाना ही नहीं है, ऐसी बात है।

दादाश्री : हाँ, ये सही है। हथियार नहीं उठाना है। अनंत अवतार से हथियार उठाकर पराये का रक्षण किया है।

ज़्यादा बोल दिया वह पागलपन लगता है न? यदि ऐसा पागलपन हो जाए, तो आपको कहना चाहिए कि 'यह चंदूभाई बोले हैं न, उन्हें मैं पहचानता हूँ। थोड़े कषायवाले हैं।' ऐसा कहना चाहिए। आप ऐसा दो-चार बार बोलोगे न, तो फिर सामनेवाला भी अपने आप को 'टेढ़ा है' ऐसा खुद कहेगा। लेकिन

यदि आप उसे ऐसे कहो कि 'आप गलत हो', तो वह आपको पकड़ लेगा। इसलिए दूसरों को गलत कहना छोड़ दो, किसीको गलत कहना ही नहीं चाहिए। यह तो हमारी बेवकूफ़ी है। किसीको गलत कहना, ब्लेइम करना, ऐसा बोलना, यह हमारी फूलीशनेस (मूर्खता) है।

पकड़ पकड़ी वहाँ नुकसान

प्रश्नकर्ता : आप ऐसा स्पष्टीकरण करते हो, तब समझ में आता है। तब तक तो बात समझ में ही नहीं आती।

दादाश्री : यही आश्चर्य है न! स्पष्टीकरण करना पड़ता है, यही इस ज़माने का आश्चर्य कहा जाता है। मैं तो लेट गो करता हूँ कि जब इन्हें समझ ही नहीं है, वहाँ क्या करूँ!

प्रश्नकर्ता : ऐसे थोड़ा बहुत भी समझ में आना चाहिए न?

दादाश्री : कॉमनसेन्स हो तो समझ में आ जाता है। कॉमनसेन्स लाने के लिए सरलता होनी चाहिए। सरलता और मृदुता, दोनों होना चाहिए। ये सब आप लोगों में होता नहीं है न!

'कॉमनसेन्स' मतलब क्या? कि 'एवरीव्हेर एप्लीकेबल, थियरेटिकल एज़ वेल एज़ प्रेक्टिकल!'

'कॉमनसेन्स' वाला व्यक्ति 'एवरीव्हेर एडजस्टेबल' होता है।

कॉमनसेन्स खीली हुई हो तो उपाय ढूँढ निकालता है। आप उलझाकर आते हो और कॉमनसेन्सवाला उलझे हुए को सुलझाकर आता है। तुरन्त ही गुत्थी सुलझा देता है।

प्रश्नकर्ता : मतलब, पकड़ नहीं पकड़नी है!

दादाश्री : *पकड़* पकड़ने से तो ज़्यादा नुकसान होता है। उसी के कारण तो ये सब खड़ा हो गया है। उसे *जक्की* (हठीला) कहते हैं। इसलिए अपना बहुत नुकसान कर डालता है। 'चाहे जितनी लातें लगें फिर भी अपनी पकड़ छोड़ूँगा नहीं', कहेगा। यह सब छोड़ना पड़ेगा न?

प्रकृति का स्वभाव सारा, जाता नहीं है न! चोखे व्यक्ति में बहुत जक्कीपन घुस जाता है। मैले व्यक्ति को जक्कीपन नहीं होता। ज़्यादा जक्कीपन से बहुत नुकसान होता है। क्योंकि जक्की व्यक्ति (खुद का) प्रोटेक्शन (बचाव) करने के लिए तरह-तरह के, जैसे चाहे ऐसे ख़राब नुसख़े इस्तेमाल करता है। हल्के प्रकार के नुसख़े भी इस्तेमाल करता है। खुद की बात सही करवाने के लिए जक्की बन जाता है।

भरे हुए माल का पक्ष नहीं लें

अहंकार अभी भी अंदर भरा हुआ है इसलिए वह चढ़ेगा तो सही न! फिर भी यह निकाली (डिस्चार्ज) अहंकार है, यह सच्चा अहंकार नहीं है। फिर भी 'खुद' 'उसका' (अहंकार का) पक्ष लेता है और सच्चा-झूठा करवाने निकला बड़ा! ऐसा नहीं होना चाहिए।

ज़िद पर अड़े तो आत्मा पर ज़्यादा आवरण चढ़ जाते हैं। वैसे तो यह ज्ञान लेने के बाद सब, व्यवहार मात्र रहा है। निश्चय से तो ज़िद भी गई, द्वेष भी गया, राग भी गया और सबकुछ गया। अब व्यवहार सचेतन नहीं है, व्यवहार अचेतन है। अचेतन मतलब, हम उसे फिर से छेड़ें तो वह जीवित हो जाता है, वर्ना वह फुटकर फिर गिर जाता है। उदाहरण के तौर पर, जौसे पटाखे का अनार होता है न! वैसे व्यवहार भी अपना लक्षण दिखाकर चला जाता है, और कुछ नहीं। उल्टा व्यवहार उल्टा लक्षण दिखाता है। आपकी समझ में आया न? अपने लक्षण दिखाता है, कि वह क्या था? फुलझड़ी थी या अनार था, ऐसे हमें सारे लक्षण पता चल जाते हैं, क्या फूट रहा है उस पर से।

लेकिन हमारा अक्रमज्ञान है, इसलिए मुर्दे जैसा अहंकार शेष रहा है। कभी न कभी निकल ही जाएगा। क्रमिक मार्ग में तो जिवीत अहंकार होता है और यहाँ अक्रम में मुर्दे जैसा अहंकार होता है, ड्रामेटिक। क्रोध-मान-माया-लोभ सभी ड्रामेटिक रहे। ये सारे कषाय, जो शेष रह गएँ हैं उनका अब निकाल करना है।

अहंकार बने मूर्ख

प्रश्नकर्ता : हमें व्यवहार में जिस कारण प्रोब्लेम खड़े होते हैं, वे बुद्धि के बजाय अहंकार के कारण ज़्यादा होते हैं, ऐसा लगता है। क्योंकि मूलत: तो अहंकार है न? यदि अहंकार नहीं हो तो बुद्धि होगी ही नहीं न? मतलब मूल दोष अहंकार का ही है न?

दादाश्री : अहंकार तो सिर्फ कहने के लिए है। वह मुआ अँधा है। इसमें बुद्धि का चलता है। मूलत: बुद्धि का दोष है। बुद्धि ने उसका लाभ उठाया है।

प्रश्नकर्ता : अहंकार तो अंधा है, लेकिन अहंकार ही मुख्य वस्तु है न? अहंकार नहीं हो तो बुद्धि ठीक से नहीं चलती?

दादाश्री : अहंकार नहीं हो, तो बुद्धि नहीं होती। अहंकार है तो मन-बुद्धि-चित्त, सबकुछ है। अहंकार अर्थात् कर्त्ता-भोक्तपन। उसे कर्त्ता-भोक्तेपन का मार पड़ता है और बुद्धि दूर रहती है। अहंकार मार खाता है, मूर्ख, मार खाता रहता है!

डीलिंग, बुद्धि के साथ....

प्रश्नकर्ता : बुद्धि की वह बात निकली थी न कि बुद्धि को अन्डरहेन्ड (नौकर) के तौर पर रखनी है, वर्ना बुद्धि बॉस (मालिक) के तौर पर रहेगी। यह ज़रा विस्तार से समझाइए न!

दादाश्री : बुद्धि का *चलण* (प्रचलन) चले तो बुद्धि बॉस बनकर बैठ जाए, और जान-बूझकर हम ठगे जाएँ तब बुद्धि समझ जाए कि अब मेरा चलण नहीं रहा। वर्ना बुद्धि जान-बूझकर धोखा नहीं खाने देती। वह प्रोटेक्शन ढूँढ ही निकालती है। किन्तु हम जान-बूझकर धोखा खाएँ, तब बुद्धि शांत हो जाती है। 'यस मेन' (हाँ जी हाँ करनेवाली) हो जाती है फिर, अंन्डरहेन्ड के तौर पर रहती है।

प्रश्नकर्ता : और फिर भी व्यवहार का काम बिगड़ता नहीं?

दादाश्री : कुछ भी बिगड़ता नहीं। व्यवहार का काम बिगड़ता होगा? व्यवहार को सुधारने के लिए तो, बुद्धि अपना काम करती ही रहती है। ये तो एक्सेस (अधिशेष) बुद्धि हमें झिड़काती है।

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में जो नोर्मल बुद्धि है और ये जो एक्सेस बुद्धि है, उसमें खुद किस तरह समझ सकते हैं कि ये एक्सेस बुद्धि है?

दादाश्री : बात-बात में इमोशनल कर डाले वो एक्सेस बुद्धि। वह सेन्सिटिव हो जाता है। बहुत सेन्सिटिव स्वभाव का है, ऐसा नहीं कहते?

प्रश्नकर्ता : जो एक्सेस बुद्धि है, उसके सामने हमें किस तरह 'फ़ेस' (सामना) करना चाहिए? ये जो इमोशनल करती है, सेन्सिटिव करती है, वहाँ किस-किस तरह से ब्रेक मारनी चाहिए?

दादाश्री : उदाहरण के तौर पर, यदि इस भाई को पुलिसवाले पकड़ ने आए तो तू उन्हें कहे कि, 'तुम यहाँ से चले जाओ, पुलिसवाले आएँ हैं।' इस तरह पिछे के दरवाज़े से बाहर भगा दे, ये है अधिक बुद्धि। उस भाई में बुद्धि नहीं थी इसलिए समझ में नहीं आता था, तब हमें रास्ता करना पड़ता है न? वे कहे भी कि, 'आपने मुझे बाहर भगा दिया, वह अच्छा किया।' तब (तू) खुद मन में गर्व लेता है कि 'चलो, अपना व्यवहार अच्छा हुआ!' इस तरह खुद गर्वरस चखता है, यह अधिक बुद्धि। लेकिन फिर वह बॉस बनकर बैठ जाती है न? फिर हमारी बाबत

में भी वह वैसा ही करती है, हमारी मर्यादा नहीं रखती।

प्रश्नकर्ता : हमारी बाबत में मतलब किस तरह?

दादाश्री : वह बुद्धि हमें भी कहेगी कि, 'यह करो, करो, और करो ही। दूसरा नहीं करने दूँगी। बहन को गालियाँ ही दो।' हमें मन में ऐसा होता है कि 'बहन को गालियाँ क्यों दें?' लेकिन वह बुद्धि कहेगी, 'नहीं, बहन को गालियाँ दो।'

प्रश्नकर्ता : बुद्धि ऐसा दिखाती है, तो उसके सामने किस तरह डीलिंग करना चाहिए?

दादाश्री : कहा न भाई, ऐसी बुद्धि को नौकर बना दो, बॉस नहीं। एक महीने तक धोखा खाते रहे तो धीरे-धीरे बुद्धि का चलण कम हो जाएगा। 'मेरा चलण नहीं है', फिर बुद्धि ऐसा कहेगी।

प्रश्नकर्ता : ये एक्सेस बुद्धि जो दिखती है उसे समझा-बूझाकर या उसका विरोध करके फ़ेस कर सकते हैं?

दादाश्री : कहा न, जान-बूझकर धोखा खाओ।

प्रश्नकर्ता : लेकिन बुद्धि का चिल्लाना तो इतना सारा होता है कि उसके पक्ष में एकाकार हो जाते हैं, तो उसका क्या करना है?

दादाश्री : किस तरह एकाकार हो जाते हो? चावल, वह चावल है और दाल, वह दाल है, खीचड़ी में अलग ही होता है न! फिर चाहे कुछ भी हो। अलग एक बार करना पड़ता है। फिर वह ऐकाकार नहीं हो जाता।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि का चलण हो और उसके आधार से आगे बढ़ें तो फिर भीतर जलन खड़ी होती है और इमोशनलपन खड़ा हो जाता है न?

दादाश्री : बुद्धि का चलण हो तो इमोशनल होता है, लेकिन जलन नहीं होती। जलन तो अहंकार खड़ा होता है, तब होती है।

करना है निकाल, निर्जीव अहंकार का

प्रश्नकर्ता : ज्ञान प्राप्त करने के बाद बुद्धि, अहंकार, किसीकी ज़रूरत रहती ही नहीं है?

दादाश्री : अहंकार चला ही जाता है। उसके बाद ज्ञान प्राप्त होता है। ज्ञानी पुरुष अहंकार को ही डिसमिस (विदा) कर देते हैं। उसके बाद यह ज्ञान प्राप्त होता है। तब कहे, 'अब संसार चलाने के लिए क्या है?' तो कहे, 'उसके लिए निर्जीव अहंकार रहता है, जीवित नहीं।' उस जीवित अहंकार को डिसमिस कर दिया जाता है। निर्जीव इगोइज़म डिस्चार्ज रूप में होता है इसलिए यह ज्ञान लेने के बाद आपमें निर्जीव अहंकार रहा है।

अज्ञान दशा का अहंकार सजीव कहलाता है। स्वरूपज्ञान होने के बाद वह निर्जीव हो जाता है। उस निर्जीव अहंकार का यदि उपराणा लिया कि, 'मैं ऐसा नहीं हूँ', तो वह फिर से सजीव हो जाता है। निर्जीव अहंकार का निकाल करना है, उसका रक्षण करना नहीं है। अहंकार सजीव नहीं हो जाए, अब ऐसा करना।

प्रश्नकर्ता : वह तो कभी-कभार ऐसा अहंकार खड़ा हो जाता है, लेकिन फिर उसका प्रतिक्रमण हो जाता है!

दादाश्री : नहीं, नहीं, लोगों की *तंतीली* (तीखी) भाषा जो है न, वह अहंकार को खड़ा कर देती है। उदाहरण के तौर पर, आपके साथ कोई तंतीली भाषा में बोले कि, 'आप ऐसे हो', ऐसी तंतीली भाषा लोगों में बहुत होती है, तांतेवाली। तो आप कहेंगे 'क्या मैं ऐसी हूँ?' इस प्रकार यदि हम, वह जो कहता है उसका रक्षण करने जाएँगे, तो फिर जो अहंकार निर्जीव किया हुआ है वह फिर से सजीव हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : वह सजीव हो गया मतलब वह फिर से चेतनवंत हो गया।

दादाश्री : बड़ी मुश्किल से अहंकार निर्जीव होता है। दूसरा सबकुछ निर्जीव हो सकता है, लेकिन अहंकार का निर्जीव होना बहुत कठिन है। अहंकार को निर्जीव किया है इसलिए कोई तंतीला बोले, कोई कहे कि, 'आप चक्रम हो', तो उस घड़ी उपराणु नहीं लेना चाहिए। हमें कहना चाहिए कि 'तुझे जो कहना है वह कह दे', व्यवस्थित में होगा उतना ही कहेगा न? हम उनसे कहें कि 'आप कहते हो, वैसे हैं।'

प्रश्नकर्ता : ऐसा हो, तो उसका बचाव नहीं करना है।

दादाश्री : यहीं पर सभी गलती कर देते हैं। अहंकार जो निर्जीव किया हुआ है, वह सजीव हो जाता है। इसलिए बाहर चाहे कुछ भी, कोई पागल भी कहे न, तो हमें फाइल का निकाल कर लेना है। उसे जो कहना है वो कहे। ये सभी भक्त लोग ऐसा बोलते हैं न कि 'आपको जो भी कहना है वो कहना। हमें तो कुछ आता नहीं है भाई।' आप ऐसा नहीं बोलते? हमारे भतीजे कुछ कहें तब हम कहते हैं कि, 'भाई, पहले से ही तुम्हारे चाचा ऐसे ही थे।' क्योंकि उसका उपराणा नहीं लेना है। वर्ना वह जो अहंकार निर्जीव था वह फिर से सजीव हो जाएगा।

हम उपराणा नहीं लेते, कोई कुछ बोले तो भी। क्योंकि अहंकार को निर्जीव किया हो और उसे सजीव करें तो फिर अहंकार सजीव होता है और फिर बढ़ता रहता है। आत्मा का भी चलता रहता है और वह (अहंकार का) भी चलता रहता है, साथ-साथ। हमें अभी कोई घनचक्कर कहे तो मैं उपराणा नहीं लेता। मैं जानता हूँ कि घनचक्कर को घनचक्कर कहता है, 'मुझे' तो वह पहचानता ही नहीं है न। मैं उपराणु लूँ तो फिर से मुझे यह अहंकार को सजीव करना पड़ता है। और अहंकार सजीव हुआ तो फिर वापस सबकुछ उलट-पलट कर डालता है।

कोई कहे कि 'आप ऐसे हो, वैसे हो, पागल हो' तो उसका उपराणा नहीं लेना चाहिए। रक्षण नहीं करना चाहिए। कहना चाहिए कि 'हम तो पहले से ही ऐसे हैं।' उपराणा लिया या रक्षण किया तो निर्जीव अहंकार जो है वह सजीव हो जाता है।

सजीव कुछ (ऐसे) होता नहीं है। हुआ था? सजीव तो ज़रा ऐसे ही, वह कच्चा है, इसलिए कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : दादा, अब आपके पास से ज्ञान लेने के बाद जिस अहंकार को आपने निर्जीव कर डाला। वह निर्जीव अहंकार किसी भी वक्त क्या सजीव हो सकता है?

दादाश्री : नहीं। वह (सजीव) हो ही नहीं सकता। वह तो लड़के को डराने के लिए कहना पड़ता है कि ज़रा सँभलकर रहना। ऐसे उपराणा लिया करता हो, तो फिर डराने के लिए कहना पड़ता है। किसीका स्वभाव ऐसे टेढ़ा हो न तो उसे कहना पड़ता है, डराने के लिए, कि तेरा सजीव हो जाएगा, तो कर्म बँधेगा।

प्रश्नकर्ता : मतलब दादा, वह तालाब के पास नहीं जाए इसलिए कहना पड़ता है कि 'वहाँ पर भूत है।'

दादाश्री : किसीको ऐसे डराना पड़ता है, किसीको ऐसा करना पड़ता है। ऐसा-वैसा करके सभी का ठीक कर देना है।

प्रश्नकर्ता : यह समझना है कि सजीव किस तरह हुआ? सजीव हो ही नहीं सकता तो फिर?

दादाश्री : हाँ, हाँ। लेकिन कल यदि वह (अहंकार) बढ़ जाए तो सजीव हो भी सकता है। बढ़ जाए और पांच आज्ञा छूट जाए न, आग्रह में पड़ जाए, तो सजीव भी हो सकता है। इसलिए जोखिम है इसमें।

प्रश्नकर्ता : कईबार तो आदत होती है न, उसे सहारा देनेवाले भी खड़े होते हैं।

दादाश्री : ऐसा तो होता ही है न! आदत में सबकुछ होता है न!

प्रश्नकर्ता : और उसका रक्षण करनेवाले भी खड़े होते हैं। आदत होती है और फिर उसका रक्षण करता है। इसलिए आदत मज़बूत हो जाती है।

दादाश्री : यदि आज रक्षण करेगा तो भी, बाद में निकालनी तो है ही न। रक्षण करके उल्टा आप ज़्यादा उधार खड़ा करते हो।

प्रश्नकर्ता : ऐसा जानते हैं कि इस आदत को निकालनी है लेकिन फिर भी उसका रक्षण हो जाता है। ध्येय तो ऐसा ही होता है कि उस आदत को निकालनी है।

दादाश्री : मतलब घर में साँप (आदत) यदि घुस गया हो, तो साँप को बाहर निकालना है ऐसा जाने, लेकिन उसे यदि रहने देना हो तो हम ना कैसे कह सकते हैं। आदत भी है और खुद भी है, दोनों....

उपराणा से फ़ायदा क्या?

कोई फेरफार होता है क्या इसमें? थोड़ी बहुत भी प्रगति होती है?

प्रश्नकर्ता : दादा, मुझे ऐसा होता है कि, उफान आए तब उपराणा ले लेती हूँ, लेकिन फिर याद आता है कि दादा की आज्ञा है कि ऐसा करना नहीं है। यानी अब भी वह पुरानी आदत है, इसलिए उफान आ जाता है, लेकिन फिर अंदर शांत हो जाता है, बाहर निकलने से पहले।

दादाश्री : हाँ। मतलब उस सामनेवाले मनुष्य को ऐसा लगता है कि सहन कर लेती है!

प्रश्नकर्ता : नहीं, सामनेवाले व्यक्ति को पता नहीं चलता कि उफान आया है भीतर। मुझे ही पता चलता है कि उफान आया है।

दादाश्री : ऐसा है कि, सामनेवाले व्यक्ति की ओर से कुछ हुआ होगा तभी उफान आएगा न ऐसा?

प्रश्नकर्ता : ऐसा, सामनेवाले व्यक्ति की ओर से कुछ नहीं भी हो, अपने मन का ही कुछ ऐसा हो और उफान आ जाए, ऐसा होता है न?

दादाश्री : ऐसा होता है। लेकिन वैसे ज़्यादातर तो, सामनेवाले व्यक्ति से भी संबंधित कुछ हो तभी तू उपराणा लेती है।

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : उपराणु ले, तो किसके सामने उपराणु ले? कोई तो सामने होना चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : हाँ। दृष्टि सब उल्टा देखती थी इसलिए किसी भी बाबत में ऐसा हो जाता था, लेकिन अब ऐसा नहीं होता।

दादाश्री : लेकिन क्या सामनेवाले व्यक्ति की समझ में आ गया?

प्रश्नकर्ता : समझ में आ ही गया होगा, मैंने पूछा नहीं है, दादा।

दादाश्री : उपराणु लेती है या नहीं? कहाँ है सामनेवाली व्यक्ति?

प्रश्नकर्ता : ये रहे, दादा।

दादाश्री : ये उपराणु लेती थी, उसकी भूल हो फिर भी उपराणु लेती थी?

प्रश्नकर्ता : वह तो स्वभाव ही हो गया न, दादा।

दादाश्री : स्वभाव का हर्ज नहीं है। स्वभाव तो डिस्चार्ज में है लेकिन जागृति होनी चाहिए न? अब शुद्धात्मा हुए।

वो अब स्त्री कहाँ रही है? वो मेरे पास आकर रोज़ कहती है कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ, शुद्धात्मा हूँ।' मैंने कहा, 'मुझे धोखा देती है? उपराणु लिया जाता होगा? अब भी लेती है?'

बोलो, हाँ या ना, डरते हो किसलिए?

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेती है। नहीं, नहीं, मैं डरता नहीं।

दादाश्री : (वाइफ) प्रतिकार करे तो मैं हूँ न! पहले तो प्रतिकार करे तब आप अकेले थे, अब तो मैं हूँ न! मुझे कह देना, यदि प्रतिकार करे तो। ठीक कर दूँगा।

प्रश्नकर्ता : वह तो उसे पता है दादा। उसे पता कि उसका कितना शांत हुआ है।

दादाश्री : उपराणु लेती है न लेकिन?

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेती है कईबार।

दादाश्री : लेती है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ।

दादाश्री : तो वहीं के वहीं ही हैं न! मन में ऐसा मान ले कि अब कुछ होता नहीं है। उपराणु नहीं ले तो समझना कि बराबर है, करेक्ट है। उपराणु लेती है उस घड़ी वह खुद का बिगाड़ती है। आपका बिगाड़ती नहीं है। तो फिर हमारी मेहनत ही बेकार हुई न। बिगड़ गए ये दोनों तो! एक बिगड़े तो दोनों बिगड़ जाते हैं। पूरा घर बिगड़ जाता है। कब तक ऐसा चलेगा? न्याय तो देखना चाहिए न? हमें उपराणा की आदत को निकालना है न?

प्रश्नकर्ता : निकालना है, दादा।

दादाश्री : उपराणु लिया जाता होगा? हम यदि दस मील चलें हों, किसलिए चलते हैं? गाँव जाने के लिए, और फिर उपराणु लें तो फिर छह मील कम हो जाते हैं। फिर अपने हिस्से में रहा ही क्या?

तो तुम क्या कहती हो, कि उपराणा लेने के बाद माफ़ी नहीं माँगती? मैंने उपराणु के बारे में ही कहा था न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तब तुमने कहा कि 'चूक गए, अब फिर से नहीं चूकुँगी।'

प्रश्नकर्ता : नहीं दादा, ऐसा होता है कि दिन में पंद्रह बार होता हो और हम सात-आँठ बार शांत करते हों, मतलब बिल्कुल ही बंद हो गया, ऐसा नहीं। लेकिन कम होता गया, ऐसा।

दादाश्री : हाँ, लेकिन बिल्कुल बंद नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : हाँ दादा।

दादाश्री : तो फिर आप वणिक नहीं हो। वणिक तो हिसाब निकाले, कि थोड़े समय के लिए चालु रहा तो और आगे होगा, बढ़ेगा!

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह तो बढ़नेवाला ही है दादा। बढ़नेवाला ही है!

दादाश्री : तो फिर उसका क्या....(अर्थ?)

प्रश्नकर्ता : सबकुछ निकल जाएगा।

दादाश्री : ऐसा मत बोलो, फिर तो उसे मनचाहा मिल जाएगा। वह उल्टे रास्ते चला जाएगा। आपको तो 'देखते' रहना है।

मन की चित्रण की हुई 'लॉ बुक'

आपको एक भी भूल दिखाई दी? यह निकाल दी, फिर भी दिखाई दी?

प्रश्नकर्ता : दिखती है, लेकिन इतना ज़्यादा क्लीयर नहीं होता।

दादाश्री : हाँ, क्लियर (स्पष्ट) होने दे न! जल्दी क्या है हमें? अभी तो १९८३ की साल है। २००५ को तो अभी बहुत देर है।

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसे थोड़े ही चलेगा? अब पुसाता नहीं ऐसा।

दादाश्री : एक तरफ़ पुसाता नहीं और दूसरी तरफ़ ऐसा बोलते हो (उपराणा लेते हो)। अब मन का 'नापसंद' बदल डालो।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इससे क्या नुकसान होता है, वह ठीक से समझ में नहीं आता।

दादाश्री : तब रहने दो। नुकसान होने के बाद करना।

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसा नहीं। मन का कहा मानना नहीं चाहिए। दूसरी ये सारी जो भूलें बताते हो, खुद की 'लॉ बुक' की, वह सब समझ में नहीं आता।

दादाश्री : वह तो मन के कहने के अनुसार आप सब लोग 'लॉ बुक' इस्तेमाल करते हो। सिर्फ उतने में ही, उतने ही सर्कल में। सुबह सत्संग में आप कहाँ देर से आते हो, ऐसी-वैसी कोई भूल नहीं है। यहाँ आने में भूल हो तो हम कहते कि 'आप रेग्युलर हो जाओ', लेकिन ऐसा कुछ है नहीं। आपकी तो वही भूलें और आप वही के वही घोटाले करते हो। मन के कहे अनुसार की 'लॉ बुक' आप इस्तेमाल करते हो। उसका उपराणा लिया करते हो। उसका उपराणा लेते हो तब उसका क्या होता है? अब आप क्या करोगे? ये तो वही की वही भूलें। दूसरी कोई नयी तरह की भूलें हैं दुनिया में? कि सुबह देरी से आते हो या आप ऐसा-वैसा करते हो या किसीको गालियाँ देकर आए? और फिर भी, बाहर तो ऐसा करते ही होंगे। दादागिरी तो करते ही होंगे, तभी तो लोगों की शिकायत आती है न?

प्रश्नकर्ता : पहले जैसा नहीं है।

दादाश्री : गलत होगा तो तुरन्त पता चल जाएगा न? प्रतिघोष आता है या नहीं आता?

प्रश्नकर्ता : आता है न।

दादाश्री : और कुछ आपका गलत नहीं है। गलत केवल यही है। मन का आप मानते हो, उसमें ही है। छोटी से छोटी बाबत, लेकिन आपके लिए इतना बड़ा निबंध लिखना पड़ता है। दूसरे को यदि इतना ही कह दिया कि, 'भाई, यह (भूल) निकाल देना।' तब वह कहे कि, 'हाँ, निकाल दूँगा।' इसलिए फिर चर्चा ही नहीं होती न उस बात की। मगर आप तो टेढ़े हो, इसलिए कहोगे, 'लेकिन अच्छा नहीं लगता उसका क्या करें? लेकिन अच्छा नहीं लगता न?' यही गाता रहे तो फिर कैसे पता चले? 'अच्छा लगे', मतलब किसे अच्छा लगता है? किसको अच्छा नहीं लगता? यह सब खोजबीन करो न थोड़ी देर के लिए। मन को अच्छा लगता है, और आप उसका आधार लेते हो? 'मन का चलता तन चले' और फिर उसकी भी 'लॉ बुक' आपकी! आप खाने-पीने में बुरे नहीं हो और दूसरे किसी में बुरे नहीं हो। सबकुछ अच्छा है, लेकिन सिर्फ इस बाबत के लिए ही, सब धूल में मिला देते हो! फिर छिन्न-भिन्न हो जाता है। इसलिए ही आपकी प्रगति अटकी हुई है।

उपराणा से पड़े दाग़ आत्मा पर

प्रश्नकर्ता : आपने कहा था कि आज के (ध्येयवाले) अभिप्राय के साथ मन यदि सहमत होता हो तो उसके अनुसार करना, और मन यदि सहमत नहीं हो तो मन के कहे अनुसार मत करना।

दादाश्री : इतना ही कहते हैं न!

प्रश्नकर्ता : आप पूछें कि 'यह तुझे अच्छा लगता है?' तो मन को अच्छा नहीं लगता है, तो 'वह अच्छा नहीं लगता' ऐसा तो कहना ही पड़ता है न? फिर, वैसा ही तो करता हूँ।

दादाश्री : 'नहीं अच्छा लगता', ऐसा कह सकते हैं? वह तो मन को अच्छा नहीं लगता, तुझे

क्या हर्ज है? मन को पसंद नहीं है उसमें तुझे क्या लेना-देना? 'मुझे अच्छा लगता है', कहना। 'नहीं अच्छा लगता' कहें, तो आत्मा वैसा हो जाता है। तुझे कितनी बार कहा है कि आत्मा जैसा चिंतवन करे वैसा हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : मुझे बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता था, फिर भी जाता था और मैं सिन्सयरली काम करता था।

दादाश्री : हाँ, तो आपको कौन मना करता है? सिन्सयरली करे तो एडजस्ट हो जाए।

प्रश्नकर्ता : मन के कहे अनुसार ही चलता हूँ, ऐसा मेरा नहीं है। कम्पलीट बदल गया हूँ।

दादाश्री : हाँ, फिर भी तू ऐसा कहता था न कि 'मुझे अच्छा नहीं लगता, फिर भी करता हूँ।'

प्रश्नकर्ता : मतलब मन को अच्छा नहीं लगता इसलिए मैं कहूँ कि 'लॉ बुक' ऐसा दिखाती है, इसलिए ऐसा नहीं, वैसा करना है। पिछला (अज्ञानता का) अभिप्राय ऐसा दिखाता है, कि हमें इस तरह नहीं करना है और उस तरह करना है।

दादाश्री : वह भले ही दिखाए। लेकिन तू ऐसा कहता था न कि 'मुझे अच्छा नहीं लगता' फिर भी ये करने जाना पड़ता है। 'मुझे अच्छा नहीं लगता' ऐसा बोलना वह कितना भयंकर गुनाह है! और सायकोलोजीकल इफेक्ट क्या होती है? आत्मा वैसा हो जाता है। नहीं अच्छा लगता हो, तो सो जा न चूपचाप! खाना, खाना हो तो खा नहीं तो पड़ा रहे। हमें 'उसका' उपराणा लेकर क्या काम है? यह तो तू ऐसा बोला कि मुझे अच्छा नहीं लगता फिर भी 'मैं सिन्सयरली करता हूँ।' अब उसका आत्मा पर क्या असर हुआ तुझे पता है? दाग़ पड़ गया। अब इस दाग़ को निकालने में कितना टाइम लगेगा? सभी जगह से दाग़ निकालने में कितना टाइम लगेगा? सभी जगह दाग़ लगा दो तो क्या होगा? अर्थात्, जैसा चिंतवन करे आत्मा वैसा हो जाता है।

मन को बिल्कुल अच्छा नहीं लगता हो, सौ प्रतिशत नहीं अच्छा लगता हो, फिर भी हमें कहना चाहिए कि 'मुझे अच्छा लगता है।' इसलिए आत्मा वैसा ही हो जाएगा। अब तू फेरफार कर डालेगा न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

कल्पे वैसा हो जाए

दादाश्री : जो मान्यता उल्टी थी, वह अब सुल्टी हो गई। फिर से वह उल्टी मान्यता नहीं घुस जाए, उसके लिए, 'तू शुद्ध है' वह छोड़ना नहीं। क्योंकि आत्मा का स्वभाव कैसा है? भगवान महावीर ने कहा है कि 'शुद्धात्मा, ऐसा समझाना। जो साधक साध्यपन प्राप्त करता है, उसे साध्यपन में शुद्धात्मा ही है ऐसा समझाना।' तब कहें 'शुद्धात्मा कहते हैं उसके बजाय दूसरा कुछ, सिर्फ आत्मा कहें तो नहीं चलेगा।' तब कहे, ''नहीं चलेगा। क्योंकि, कभी कोई ऐसे कर्म का उदय आएगा, उस घड़ी उसे खुद को ऐसा ही लगेगा कि 'मैंने ऐसा किया, मैंने ऐसा किया।'' यह कहने के साथ ही वह लटका (चंदूरूप हो गया)। क्योंकि कर्त्ता कौन है? व्यवस्थित। किसका किया? तब कहें, रिलेटिव का। मैं रियल हूँ। आत्मा का गुण क्या है? तब कहे, जैसा चिंतवन करे वैसा हो जाए। मतलब यदि शुद्धात्मा का चिंतवन किया तो शुद्धात्मा हुआ और नहीं तो हो जाए वह उस रूप। (जिसका चिंतवन किया वैसा।)

एक केवल आत्मा ही ऐसा है, क्योंकि खुद जैसी कल्पना करे न वैसा हो जाए। 'मैं लेफ्टनन्ट हूँ' कहे, तो वैसा हो जाए। 'मैं अज्ञानी हूँ' कहे, तो वैसा हो जाए, 'मैं क्रोधी हूँ' कहे, तो वैसा हो जाए। जैसी कल्पना करे वैसा हो जाए। इसलिए हम क्या कराते हैं? कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ', इसलिए वह वैसा होता जाता है। हमने जो दिखाया है, वह वैसा होता जाता

है। पाँच वाक्य (आज्ञा) दिए हैं। सभी पाप जो हैं वे इस चंदू के, तुझे क्या लेना-देना? मतलब पराई चीज़ हम अपने सिर पर ले लें तो फिर उस रूप हो जाएँ। यह विज्ञान है। सिर्फ आत्मा का ही ऐसा स्वभाव है कि जैसा चिंतवन करे वैसा हो जाए। तुरन्त ही, देर ही नहीं लगती।

जागृति का सद्उपयोग या दुरुपयोग?

प्रश्नकर्ता : कौन-से प्रकार की जागृति रखें कि जिससे उस घड़ी भान रहे और उसे प्रोटेक्शन नहीं दिया जाए?

दादाश्री : जागृति क्या रखनी है? हमारा कहा सुन लो, मतलब हो गया, खतम हो गया। वह जागृति तो मैंने दि हुई है न! उस जागृति का सद्उपयोग नहीं होता, दुरुपयोग होता है।

प्रश्नकर्ता : जागृति का दुरुपयोग होता है वह समझ में नहीं आया, दादा।

दादाश्री : यहाँ पर लाइट हो और दूसरी ओर अँधेरा हो और फिर मैं ऐसे घूमकर (अँधेरे की ओर) खाने बैठूँ तो मुझे खाना दिखेगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं दिखेगा।

दादाश्री : उसे सद्उपयोग किया कहते हैं?

प्रश्नकर्ता : दुरुपयोग।

दादाश्री : फिर जंतुओं को गिनना, जो अंदर गिरते हैं।

खेंच की पकड़ में फँसे तो.....

प्रश्नकर्ता : दादा का 'ज्ञान' मिलने के बाद, साधरण तौर पर जीवन कैसा होना चाहिए?

दादाश्री : *बिना खेंच* का जीवन जीना चाहिए। खेंच यानी, उदाहरण के तौर पर, मैं कहूँ कि, 'ऐसा है।' मतलब फिर आप अपना सही ठराने के लिए बार-बार उस बात को सही बताते रहें, उसे खेंच कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : खुद का सही ठराने के लिए वह व्यक्ति बहुत दलीलें करने लगे और खुद का सही ठराने के लिए प्रयत्न करें, तब समझना है कि 'बेज़' गलत है।

दादाश्री : दलीलें भी खुद की, जागृतिपूर्वक की नहीं होती। अजागृति हो तभी दलील करें न! मनुष्य अजागृत हो तब दलील करता है। जागृतिवाले कहीं दलील करते होंगे?

प्रश्नकर्ता : दलील करना, यह गलत है या सही है?

दादाश्री : वह संसार में अच्छा है। संसार में यदि आपको कुछ करना हो तो अच्छा है लेकिन मोक्ष में जाना हो तो गलत है।

इसलिए तय करना चाहिए, कि मोक्ष चाहिए या यह (संसार) चाहिए, ऐसा कहना 'उसे' (अहंकार को)। मोक्ष चाहिए तो यह नहीं मिलेगा और यह होगा तो मोक्ष नहीं होगा। ऐसा कहना चाहिए हमें।

प्रश्नकर्ता : लक्षण पर से पता चलता है।

दादाश्री : हाँ। हम तो, बहुत रक्षण करें तो छोड़ देते हैं। जान जाते हैं कि हेबीट ही पड़ गई है। मेरा छोड़ देना ही अच्छा है न!

प्रश्नकर्ता : आपका तो छूटा हुआ ही है न, दादा!

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। आप खींचा-तानी करो तो फिर मैं उस बात को छोड़ दूँ, वह ज़्यादा अच्छा है न!

प्रश्नकर्ता : हाँ दादा, हमें छोड़ देना चाहिए लेकिन नहीं छूटे तो आप तो छोड़ ही देते हो न।

दादाश्री : नहीं, लेकिन मुझे छोड़ देना चाहिए या पकड़ के रखना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : आप छोड़ ही देते हो न, दादा।

दादाश्री : तो फिर आप वैसे के वैसे ही रहे। आपकी समझ में नहीं आया! मैं क्या कहना चाहता हूँ?

प्रश्नकर्ता : हाँ, मेरी समझ में आ गया, दादा।

भूलों का रक्षण, तो खुद का भक्षण

क्या जागृति के बगैर चंचलता आती है?

प्रश्नकर्ता : लेकिन जागृति आए तो ही चंचलता जाती है।

दादाश्री : जागृति (व्यवहारिक जागृति) के बगैर चंचलता नहीं होती और जागृति हो तो ही चंचलता चली जाती है।

प्रश्नकर्ता : चंचलता होती है तब जागृति नहीं होती?

दादाश्री : नहीं, उस जागृति (व्यवहारिक जागृति) से चंचलता हुई। लेकिन अब चंचलता हुई, वहाँ हमें जागृति रखनी चाहिए। चंचलता, वह तो सबसे बड़ी जागृति कहलाती है। इतनी सारी चंचलता होती नहीं है, आप में जितनी चंचलता है, उतनी सभी लोगों में नहीं होती, उनकी बिसात ही नहीं। लेकिन उस चंचलता पर जागृति रखो। मतलब, चंचलता की असर आपको नहीं होनी चाहिए, ऐसे जागृत हो जाओ। इफ़ेक्टिवनेस और सेन्सिटिवनेस चेहरे पर तुरन्त ही आ जाता है, तुरन्त ही पता चल जाता है। छोटा बच्चा भी समझ जाता है कि ये इफेक्टीव हो गए। हमें पूछने नहीं जाना पड़ता।

अब उसका (चंचलता का) ही हम उपराणा ले लेते हैं, तो क्या होता है? उसका रक्षण करते हैं, तो फिर किसका भक्षण करते हैं? हम एक का रक्षण करें तो भक्षण किसका करते हैं?

प्रश्नकर्ता : खुद अपना ही होता है।

दादाश्री : अपनी खुद की स्थिरता का भक्षण करते हैं।

आत्मा होकर पुद्‌गल का उपराणा किसलिए?

चंदूलाल के नाम की कोई बात करे और वह बात कान से सुनने में आई, तो सुनकर फिर मुँह बिगड़ जाता है। मतलब आप चंदूलाल थे वह बात निर्विवाद हो गई। अब आप आत्मा हो, और चंदूलाल बिल्कुल नहीं हो। चंदूलाल की चाहे जितनी बातें हो, लोग चाहे चंदूलाल की बातें करें, किन्तु हम आत्मा हैं! चंदूलाल को और हमें क्या लेना-देना?

किन्तु, चंदूलाल कहता है और 'खुद' उसमें परिणमित होता है। हमें तो, चंदूलाल कहता है उसे 'देखते' रहना चाहिए। और चंदूलाल को उल्टा डाँटना चाहिए कि, 'क्यों इस बात को इतना खींचते रहते हो? शरम नहीं आती?' सभी के पास बात को खींचता है और फिर इसे वह अपने आपको जीता हुआ मानता है। चंदूलाल ऐसा करते हों तब हमें बार-बार उन्हें झिड़काना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : चंदूलाल खेंच रखे, तो भले ही रखे। हम यदि अलग रहें तो क्या हर्ज है? 'खुद' यदि खेंच से अलग हो जाए न, तो खेंच अपने आप झड़ जाती है।

दादाश्री : वह (खेंच) हो जाता है, ऐसा ही है। लेकिन आपके मन में ऐसा है कि, 'इन सभी को नहीं करने दूँ, मैं कर लूँ, ऐसे मैं कर लूँ।' लेकिन मैं करते-करते चंदूलाल हो जाते हो 'आप'।

प्रश्नकर्ता : 'खुद' चंदूलाल ही हो जाता है उस घड़ी पर।

दादाश्री : खेंच जो है वही रोग है। खेंच

छोड़ दे न, तो सबकुछ उनका (चंदूलाल का) राह पर आ जाएगा। खेंच छोड़ देते थे तब सब ठीक हो जाता था और खेंच को पकड़ा कि इकट्ठा हो गया (चंदूलाल में एक हो गए)! उस खेंच को तोड़ने के लिए तो हम दूसरों को कहते हैं कि तू ऐसा करना। जब तक खेंच है, तब तक 'चंदूलाल'। खेंच छूटी की तुरन्त 'आत्मा'। हमें तो दादा के पास रहने को मिला वही आश्चर्य है न! यह आपकी समझ में आता है? कुछ काम का है?

प्रश्नकर्ता : मुझे ऐसा होता है कि यह (चंदूलाल) खेंच रखता है, इतना मेरी समझ में आता है। लेकिन पहले की बिलीफ़ पड़ी हुई है न.....

दादाश्री : अरे, बिलीफ़ किसे पड़ी हुई है? मुआ, ऐसा ही बोलते रहते हो, आत्मा के तौर पर अलग कर देता हूँ, फिर भी!

प्रश्नकर्ता : मुझे अंदर इतना समझ में आता है कि यह गलत हो रहा है। और कभी मुझे ऐसा भी लगता है कि मैं चंदूलाल से अलग हूँ। लेकिन फिर भी वापस सब एक हो जाता है।

दादाश्री : आप (फाइल नं-१ को) डाँटते हों, तब सबकुछ अलग हो जाता है। झगड़ा हुआ तब से ही दृष्टि आमने-सामने हो गई। मतलब (चंदूलाल) बातचीत में खेंच करते हों तो, 'चंदूलाल क्यों बात को खिंचते हो? तुझमें जानवरपना है क्या? उसमें खींचा-तानी किसलिए करते हो? बाहर कैसा दिखता है?' ऐसे, ठीक से डाँटते हों तो क्या गलत है? 'दादा कहते हैं तो आप सोचो तो सही', ऐसे कहना न! और दिन में पाँच-पच्चीस बार डाँट देने से चंदूलाल अलग हो जाता है। यह हमारा वचनबल है।

डिफेक्ट को जाननेवाला आत्मा

प्रश्नकर्ता : दादा, मुझमें बड़ी डिफेक्ट यही है की.....

दादाश्री : डिफेक्ट है, लेकिन (उसे) जानते हो न तो आप आत्मा हो। 'तुम' आत्मा हो और 'यह' पुद्गल है। आप में कहाँ डिफेक्ट है? डिफेक्ट तो, यह पुद्गल ऐसा है, बंध ऐसा बँधा हुआ है, उसमें हमें क्या नुकसान है? दादा सिर पर हैं और पुद्गल राशि हो तो दादा चला ले, लेकिन हम क्यों अपने सिर पर लें? आप चंदूभाई थे तब तक तो सिर पर लेना पड़ता था। अब चंदूभाई नहीं हो तो चंदूभाई का बोझ हमें क्यों लेना है? पड़ोसी के साथ तो पद्धतिसर होता है। वह रोए तो क्या हमें रोने लगना है? यह चंदूभाई ऐसे हैं, ऐसा जाने, उसका नाम ही ज्ञान!

अर्थात् हम अब चंदूलाल नहीं हैं और अब हमें शुद्धात्मा हो जाना है। दूसरी क्या ज़रूरत है? आपको वास्तव में ऐसा यक़िन हो गया कि आप चंदूलाल नहीं है। और चंदूलाल की मिल्कियत, वह तो उसकी है, मुझे क्या लेना-देना? और उस मिल्कियत को भी देखा हमने। वह सारी विनाशी मिल्कियत थी। गुम हो जाने के बाद मिलती नहीं और मिलने के बाद फिर से गुम हो जानेवाली है। और ये मेरी (शुद्धात्मा की) मिल्कियत तो विनाशी नहीं है, अविनाशी है। ये मेरी मिल्कियत तो अलग तरह की है।

नहीं लेना चाहिए उपराणा पुद्गल का

जब कोई दख़ल हो जाए तब कहें, अक्रम में ऐसा है कि 'भूल हुई तो छोड़ देना' अथवा तो 'मेरा नहीं है' ऐसा कह दिया कि छूट गया। अपना नहीं है ये सब और उपराणा नहीं लेना है। पुद्गल का उपराणा लें तब हमें ऐसा होता है न! पुद्गल का उपराणा लेते हैं न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, पुद्गल का उपराणा लेते हैं।

दादाश्री : पुद्गल का उपराणा लिया कब कहा जाता है? यदि मच्छर काट गया हो, तो मच्छर पर द्वेष होता रहता है, यानी उपराणा लिया। और हमें कोई द्वेष नहीं है और राग भी नहीं है, शरीर पर से मच्छर को उड़ा दिया, उसे उपराणा नहीं कहते।

समझ में आए तो काम निकल जाए

तैयार हो जाओ तो काम निकल जाए ऐसा है। नहीं तो फिर कच्चे रहे जाओगे। प्रोटेक्शन करोगे तो फिर कच्चे रहे जाओगे। परिपक्व कोई करके देगा नहीं। क्योंकि, ऐसा फिर कौन रिपेर करके देगा? ज्ञान के बाद भी यदि कच्चा रह गया, तो उसे कौन रिपेर करके देगा? इसलिए अभी भी प्रोटेक्शन तो करेगा, लेकिन प्रोटेक्शन करे तो उसके भी प्रतिक्रमण करना और भूल हुई उसके भी प्रतिक्रमण करना। करनेवाले को भी मैं जानता हूँ। यह तो भीतर इतनी बड़ी-बड़ी गाँठें पड़ी होती हैं। और उसके आधार पर तो जीते हैं। उन गाँठो की वजह से ही तो लोगों पर लगाव नहीं होता। सभी लोगों के लिए लगाव होना चाहिए? क्यों नहीं होना चाहिए? सभी आत्मा हैं, तो लगाव नहीं होना चाहिए? इसलिए तो हम कहते हैं न, मतलब निस्पृहता नहीं, सस्पृह-निस्पृह कहते हैं। आत्मा की बाबत में सस्पृह हैं। पुद्‌गल की बाबत में निस्पृह हैं। इसलिए लगाव तो होता है न! सस्पृह यानी सभी जगह पर लगाव होता है, जीव मात्र के साथ। और तू कहता है कि 'मुझे दादा के अलावा और किसी जगह पर लगाव होता ही नहीं है।' तो सबकुछ कहाँ घुस गया? तब कहें, 'इन गाँठो में।' इतनी बड़ी-बड़ी गाँठें पड़ी हुई होती हैं। इसे कौन तोड़ेगा? और सीधे सादे लोग तो मार खा-खाकर मर गए फिर भी गाँठ को नहीं छोड़ते। गधे की पूंछ पकड़ी। और ये (दूसरे लोग) तो बेचारे झूठ बोलते हैं, टेढ़ा बोलते हैं, लेकिन राह पर ले आते हैं। और वे सीधे लोग तो झूठ भी नहीं बोलते। और वह सच नहीं होता। सच तो फिर उनकी समझ से है न! सत्य उनकी समझ का ही न! अभी भी राह पर आ जाओ तो काम हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : अब राह पर आ जाना है, दादाजी।

दादाश्री : पहले कहते थे कि, 'इन सभी को उनके दोष बताते हैं। और हम दोनों को ही क्यों नहीं बताते?' मैंने कहा, 'तुम दोनों को कहने जैसा नहीं है।' और जब कहने लगा, तब से तुम दोनों प्रोटेक्शन करने लगे। यानी अनादिकाल से जो दोष हैं न, उनका प्रोटेक्शन ही करते रहे हैं।

प्रश्नकर्ता : उल्टे, परतें चढ़ाते रहे हैं।

दादाश्री : हाँ, खाना खिलाते रहे हैं। और हमने रिपेर करने के लिए लिया। वर्ना कौन रिपेर करके देगा? फिर हमारा छोड़ा हुआ रिपेर कोई दूसरा....

प्रश्नकर्ता : दूसरे किसकी बिसात ही नहीं, दादाजी।

दादाश्री : कोम्पलीकेटेड हो गया होता है। कोई *भांजगड़* ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : प्रोटेक्शन किसलिए हो जाता होगा?

दादाश्री : अहंकार ऐसा है कि खुद भूल क़बूल करता नहीं है। क़बूल नहीं करे तो उसका हर्ज नहीं है, लेकिन ऊपर से उसका प्रोटेक्शन करते हैं। जैसे कि, आज सुबह ये अकेला (व्यक्ति) था और साथ में दूसरा एक था। और वह आकर (यहाँ) खड़ा रहा। उसके मन में ऐसा कि यहाँ विधि करनी है। तब मैंने कहा, 'अरे, सभी को इकट्ठे होने दे, सभी को आने तो दे, ऐसा क्यों करता है, आने दे सभी को।' तब कहता है कि, 'यदि आपने कहा होता तो मैं सभी को बुला लाता।' हर एक बात में प्रोटेक्शन करता है। और खुद जानते भी नहीं होते हैं कि यह प्रोटेक्शन कर रहे हैं। भान ही नहीं है न! बेभानपन! हर एक मनुष्य जो भूल करता है न, वह बेभानपन में करता है। भान में नहीं करता है। भान में भूल करता होगा? बेभानपन हो, तब भूल करता है।

प्रश्नकर्ता : सही है, आपने कहा नहीं तब तक तो पता ही नहीं चला था कि यह प्रोटेक्शन हो रहा है।

दादाश्री : प्रोटेक्शन, यह तो बड़ा प्रोटेक्शन।

प्रोटेक्शन तो दूसरे लोग करें वह अलग, और ये आपके प्रोटेक्शन अलग तरह के।

चाहिए प्रतिक्रमण, भूलों के रक्षण के

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि प्रोटेक्शन करता है, फिर भी पता ही नहीं चलता कि यहाँ पर प्रोटेक्शन हुआ, ऐसे।

दादाश्री : कौन कहेगा तुझे? कौन सीखलाएगा? और वो जानेगा भी कैसे कि तुने प्रोटेक्शन किया। कोई ऐसा कहेगा कि 'तू फिर से वकालत करता है, भूल करके?' ऐसा बोलें, लेकिन 'प्रोटेक्शन किया' ऐसा नहीं बोलते। 'वकालत करता हूँ', ऐसा बोलते हैं। दो प्रतिक्रमण करना। एक तो भूल हुई, उसका। दोष को दोष के तौर पर स्वीकार लेना चाहिए। और दूसरा ऊपर से यह प्रोटेक्शन किया, उसका।

प्रश्नकर्ता : दो प्रतिक्रमण।

दादाश्री : हर एक बात पर प्रोटेक्शन करता है। क्या ऐसा नहीं होता? कई बार तो ऐसा होता है कि प्रोटेक्शन तेरे मन में ही होता है लेकिन बाहर नहीं निकलता। मन में तो होता ही है।

प्रश्नकर्ता : प्रोटेक्शन ही हुआ! वह तो सबकुछ मन में होता है इसलिए तो प्रोटेक्शन ही हुआ न?

दादाश्री : उसे प्रोटेक्शन किया ही कहते हैं। लेकिन कई बार वह बाहर निकलता नहीं और कई बार बाहर निकलता है। खुद की भूल का प्रोटेक्शन करने के बाद क्या वह उस व्यक्ति को मिलता नहीं? वह व्यक्ति वहाँ (रिश्ता) तोड़ डालता है। जगत् किस तरह इसमें से निकलेगा? किस तरह लोगों का ये सब निकलेगा?

प्रश्नकर्ता : कौन समझाएगा ये सब?

दादाश्री : अपना ज्ञान है इसलिए ठंडक रहती है और ये सबकुछ रहता है। लेकिन ये दूसरे व्यवहारिक बल किस तरह सहन कर लें? इसलिए सभी व्यवहारिक बातें करता हूँ।

भूल तो तोड़नी ही पड़ेगी न?

यह तो आपको छटकने का रास्ता मिला, 'ज्ञानी पुरुष' मिले, तो उससे छटक जाओगे। 'ज्ञानी पुरुष' आपकी भूल के लिए क्या कर सकते हैं? वे तो सिर्फ आपकी भूल दिखाए, प्रकाश दे। रास्ता दिखाए कि भूल का उपराणा मत लेना। फिर यदि भूलों का उपराणा लें कि, 'हमें तो इस दुनिया में रहना है, तो ऐसा किस तरह कर सकते हैं?' अरे, इस तरह भूल को पोषण दिया। उपराणा मत लेना। एक तो भूल करता है और ऊपर से कल्पाँत करता है, तो कल्प के अंत तक रहना पड़ेगा!

कभी भी अच्छा संयोग मिला नहीं है। यह अच्छा संयोग 'ज्ञानी पुरुष' का मिला है तो आपका काम निकल जाएगा! कभी न कभी तो भूल को निकालनी ही पड़ेगी न?

हम आपको इतना ही कहते हैं कि दस लाख सालों में भी ऐसा हुआ नहीं है, वैसा यह (अक्रम विज्ञान) हुआ है। यह तो बहुत ऊँचा विज्ञान है। यह विज्ञान किसी जन्म में मिला नहीं है। मिला है तो उसे सँभालकर रखना।

जय सच्चिदानंद

'दादावाणी' पत्रिका के वार्षिक सदस्यों के लिए सूचना

आपको आपकी दादावाणी पत्रिका की सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पत्ता कैसे चलेगा? आपको मिली इस महिने की दादावाणी पत्रिका के कवर पर लगे हुए लेबल पर यदि ग्राहक नं. के बाद # हो तो यह आपकी अन्तिम दादावाणी पत्रिका है। उदा. DHIA11250 # और यदि लेबल पर ग्राहक नं. के बाद ## हो तो 1 महिने बाद आपकी सदस्यता समाप्त होगी। उदा. DHIA11250 ##. दादावाणी पत्रिका रिन्यु कराने के लिए पेज नं. १ पर दर्शाये गए मूल्य अनुसार एम.ओ. या डी.डी. (पेयेबल अहमदाबाद) त्रिमंदिर अडालज के पत्ते पर भेजें। साथ ही नाम, पूरा पत्ता पीनकोड के साथ, फोन-मोबाइल नं., इ-मेइल आदि आवश्यक जानकारी अवश्य दें।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

त्रिमंदिर अडालज

दि. ७ **नवम्बर** (रवि) सुबह ८-३० से १२-३० - **(वि.सं.) नूतन वर्ष** के अवसर पर **पूजन-दर्शन-भक्ति**

नैरोबी-मोम्बासा (केन्या)

आध्यात्मिक ज्ञानशिविर : दि. **22 से 24 अक्तूबर** (शुक्र-शनि-रवि), सुबह १० से १२, शाम ४-३० से ७
स्थल : ब्रुकहाउस स्कूल, मगाडी रोड, लंगाता, **नैरोबी. फोन :** +254 724841001
दि. **25-27 अक्तूबर** (सोम-बुध)-रात ८ से १०-**सत्संग** तथा दि. **26 अक्तूबर** (मंगल), शाम ७ से १०-**ज्ञानविधि**
स्थल : विशा ओशवाल सेन्टर ऑडिटोरियम, रिंग रोड, नकुमेट उकाय के सामने, **नैरोबी.**
फोन : +254 735856516, 724841001, 737777666, **E-mail:** admin@dadabhagwan.or.ke
दि. **29-30 अक्तूबर** (शुक्र-शनि)-रात ८ से १०-**सत्संग** तथा दि. **31 अक्तूबर** (रवि), शाम ४ से ७-३०-**ज्ञानविधि**
स्थल : नवनात भवन, वेम्बे तयारी रोड, सेफायर होटल के पीछे, **मोम्बासा. फोन :** +254 770081727

दुबई (यु.ए.ई)

दि. **२-३ नवम्बर** (मंगल-बुध), शाम ७ से ९-**सत्संग** तथा दि. **४ नवम्बर** (गुरु)-शाम ५ से ९-**ज्ञानविधि**
स्थल : हॉटल Dhow Palace, स्टान्डर्ड चार्टर्ड बैंक के पास, कुवैत स्ट्रिट, बर दुबई.
फोन : (+971 50) 5536345, 7853967, **E-mail: :** appu_vora@hotmail.com

मुंबई

दि. **३-४ दिसम्बर** (शुक्र-शनि), शाम ६-३० से ९-**सत्संग** तथा दि. **५ दिसम्बर** (रवि)-शाम ५-३० से ९-**ज्ञानविधि**
स्थल : आज़ाद मैदान, बी.एम.सी. हेड ऑफिस के सामने, वी.टी स्टेशन के सामने. **फोन :** 9323528901

अमरावती

दि. **७-८ दिसम्बर** (मंगल-बुध), शाम ६-३० से ९-**सत्संग** तथा दि. **९ दिसम्बर** (गुरु)-शाम ६ से ९-३०-**ज्ञानविधि**
स्थल : संत ज्ञानेश्वर सांस्कृतिक भवन, आई.टी.आई. कॉलेज के सामने, मोरशी रोड. **फोन :** 9850255285

भिलाई

दि. **११-१३ दिसम्बर** (शनि-सोम), शाम ६ से ८-३०-**सत्संग** तथा दि. **१२ दिसम्बर** (रवि)-शाम ४ से ७-३०-**ज्ञानविधि**
स्थल : नहेरु सांस्कृतिक भवन, सेकटर-१, भिलाई, जि. दुर्ग (छत्तीसगढ़). **फोन :** 9827874148

कोलकता

दि. **१७-१८ दिसम्बर** (शुक्र-शनि), शाम ६ से ८-३०-**सत्संग** तथा **१९ दिसम्बर** (रवि)-शाम ५ से ८-३०-**ज्ञानविधि**
स्थल : विद्या मंदिर, १, मोईरा स्ट्रीट, मीन्टो पार्क, कोलकता. **फोन :** 033-32933885

पूज्य नीरूमाँ को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत ✦ **'ज़ी जागरण'** पर हर रोज़ रात ९-३० से १० (हिन्दी में)
✦ **'अरिहंत'** चेनल पर हर रोज़ सुबह १० बजे १०-३० (गुजराती में)
✦ **'दूरदर्शन-गिरनार'** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० और दोपहर ३-३० से ४ (गुजराती में)
USA ✦ **'TV Asia'** पर हर रोज़ सुबह ६-३० से ७ (गुजराती में)
UK ✦ **'Aastha International'** पर हर रोज़ सुबह ८ से ८-३० (गुजराती में)
✦ **समग्र विश्व में** (भारत के अलावा) **सोनी टीवी** पर (हर रोज़) सुबह ७ से ७-३० (हिन्दी में)

राजकोट शहर में अनुपम अवसर....

परम पूज्य दादा भगवान का १०३वाँ जन्मजयंती महोत्सव

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में...

दि. १६ से २० नवम्बर २०१० (महात्मा-मुमुक्षुओं के लिए सत्संग शिविर)

दि. १४ से २१ नवम्बर २०१० (स्थानिक लोगों के लिए प्रदर्शनी)

- **आध्यात्मिक ज्ञानशिविर :** दि. **१६ से १९ नवम्बर**, सुबह ९-३० से १२, शाम ७-३० से १०
- **ज्ञानविधि** (आत्मसाक्षात्कार पाने का भेदज्ञान का प्रयोग) : दि. **१७ नवम्बर** शाम ६-३० से १०
- **जन्मजयंती उत्सव :** दि. **२० नवम्बर**, सुबह ८-३० से १, शाम ४-३० से ६-३० : पूजन-दर्शन-भक्ति
- **विशेष आकर्षण :** मल्टीमीडिया शॉ (थीमपार्क) और बच्चों के लिए बालदुनिया (चिल्ड्रन पार्क) - हररोज़ शाम ५ से रात १० बजे तक

स्थल : रेसकोर्स ग्राउन्ड, राजकोट. संपर्क : ९३७४२१२०००

सूचना : जिन महात्माओं के पास दादा भगवान परिवार का परमानेन्ट आई-कार्ड है, उनसे निवेदन है कि वे अपना आई-कार्ड अपने साथ अवश्य लेकर आएँ।

बाहरगाँव से आनेवाले महात्मा-मुमुक्षुओं की व्यवस्था हेतु खास सूचनाएँ

(१) इस महोत्सव में भाग लेने इच्छुक महात्मा-मुमुक्षुओं से निवेदन है कि दि. **३१ अक्तूबर २०१०** तक अपने नजदीकी सत्संग सेन्टर पर और जहाँ पर सत्संग सेन्टर नहीं है, वे महात्मा-मुमुक्षु अडालज त्रिमंदिर (फोनः ०७९-३९८३०४००) पर अपना रजिस्ट्रेशन अवश्य करवा लें। रजिस्ट्रेशन करवाते समय अपने परमानेन्ट आई-कार्ड का नंबर अवश्य लिखवाएँ।

(२) महोत्सव में स्त्रियों एवं पुरुषों के रहने की व्यवस्था अलग-अलग होने से अपना सामान अलग लाएँ।

(३) ओढ़ने एवं बिछाने का चद्दर, एयर पीलो, टोर्च, लॉक, ज़रूरी दवाएँ साथ लेकर आएँ।

(४) किसी भी प्रकार की अनावश्यक क़ीमती चीज़ें साथ में न लाएँ। अपनी क़ीमती चीज़ों की रक्षा खुद करें।

जन्मजयंती स्थल पहुँचने के लिए सामान्य जानकारी

- महोत्सव स्थल, रेल्वे स्टेशन और बस डिपो से ३ कि.मी. की दूरी पर है। दोनों जगह से ओटो रीक्षा का किराया शटल रीक्षा में अंदाजित रु. ५ प्रति व्यक्ति और स्पेश्यल ओटो रीक्षा का किराया लगभग रु. २० होता है। एयरपोर्ट से सिर्फ १ कि.मी. की दूरी पर है। वहाँ से ओटो रीक्षा का किराया लगभग रु. २० होता है।

पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत
- **'दूरदर्शन'** पर हर गुरुवार सुबह ९ से ९-३० (हिन्दी में) - **नई दृष्टि, नई राह**
- **'आस्था'** पर हर रोज़ रात १०-२० से १०-५० (हिन्दी में)
- **'अरिहंत'** चेनल पर हर रोज़ शाम ७-३० से ८ (गुजराती में)
- **'दूरदर्शन' डीडी-गिरनार** पर हर रोज़ रात ९ से ९-३० - 'ज्ञानप्रकाश' (गुजराती में)

U.S.A.
- **'SAHARA ONE'** पर सोम से शुक्र, सुबह ९ से ९-३० (गुजराती में)

UK
- **'Aastha International'** पर हर रोज़ रात ९-३० से १० (गुजराती में)

अक्तूबर २०१०
वर्ष - ५, अंक - १२
अखंड क्रमांक - ६०

दादावाणी

RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. GAMC - 1500/2009-2011
Valid up to 31-12-2011
LPWP Licence No. CPMG/GJ/15/2009-2011
Valid up to 31-12-2011
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

उपराणा (तरफ़दारी) से होता है एक्सटेन्शन

जो हमारी प्रतीति में आया है और समझ में आया है वह अवश्य होनेवाला है, निर्विवाद। लेकिन वह होने में देर लगे, उसका कारण यह है कि जब तक नासमझी थी तब तक हम उसका उपराणा लेते थे (उसकी तरफ़दारी करते थे)। जब किसी वस्तु का उपराणा लेते है न, तब वह ज्यादा मजबूत हो जाती है। 'यह वस्तु गलत है' और 'करने जैसी नहीं है' ऐसा हमने जाना तो फिर उस वस्तु को गलत ज़ाहिर कर देनी चाहिए। कोई हमसे उस वस्तु की बात करने आए और पूछे कि यह सही है या गलत, तो हमें तुरंत ही कह देना चाहिए कि यह गलत है, यह मेरी कमज़ोरी की वजह से होता है। इतना ज़ाहिर करना ताकि उसे एक्सटेन्शन (बढ़ावा) न मिले। और अगर कहे कि उसमें क्या हर्ज है? तो फिर उसे बीस साल का एक्सटेन्शन मिल जायेगा।

-दादाश्री

Publisher & Editor Mr. Deepakbhai Desai on behalf of Mahavideh Foundation Printed at **Mahavideh Foundation, Printing Press** :- Parshvanath Chembers, Income Tax, Ahmedabad-14 and published.

Printed by Mahavideh Foundation - (079) 27542964,27540216